ओ३म्

आर्य जगत्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

रविवार, 23 फरवरी 2020

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक पत्र

सप्ताह रविवार, 23 फरवरी 2020 से 29 फरवरी 2020

फाल्गुन कृ. – 15 ● वि० सं०–2076 ● वर्ष 62, अंक 08, प्रत्येक मगंलवार को प्रकाश्य, दयानन्दाब्द 196 ● सृष्टि–संवत् 1,96,08,53,120 ● पृ.सं. 1–12 ● इस अंक का मूल्य – 2.00 रुपये

ऋषिजन्मोत्सव पर बटाला में हुई भाषण प्रतियोगिता

एस.एल.बावा डी.ए.वी. कॉलेज बटाला में स्वामी दयानन्द सरस्वती जी के जन्मोत्सव के उपलक्ष्य में "भाषण–प्रतियोगिता" का आयोजन किया गया। कार्यक्रम का आरम्भ ज्योति प्रज्ज्वलन और वेद मंत्रोच्चारण से हुआ।

प्रतियोगिता में विद्यार्थियों में महर्षि दयानन्द सरस्वती के जीवन–दर्शन, शिक्षा के क्षेत्र में उनके योगदान, स्वामी दयानन्द की हिन्दी भाषा की देन, नारी उद्धारक महर्षि दयानन्द आदि विषयों पर विचार प्रस्तुत करके अपना शानदार प्रदर्शन किया।

प्राचार्य डॉ. वरिंदर भाटिया ने स्वामी दयानन्द सरस्वती जी के व्यक्तित्व पर प्रकाश डालते हुए कहा कि वे एक युग पुरुष थे जिन्होंने आजीवन वेदों का प्रचार–प्रसार करके भारतीय जनमानस को विशेषकर नारी–जाति को नया जीवन और नयी दिशा प्रदान की। हिन्दी–भाषा में करके उसे राष्ट्रभाषा का दर्जा दिया। डॉ. भाटिया ने कहा कि समस्त डी.ए.वी. संस्थाएँ महर्षि दयानन्द जी के पद्चिह्नों पर चलने के लिए वचन बद्ध रही हैं। उन्होंने हिन्दी–विभाग को इस आयोजन की बधाई दी और विद्यार्थियों को शुभकामनाएँ दी।

प्रो. (डॉ.) मंजुला उत्पल तथा प्रो. (डॉ.) सरोज बाला ने महर्षि दयानन्द सरस्वती की वैदिक शिक्षाओं पर प्रकाश डाला। इस प्रतियोगिता में बीकॉम छठे समैस्टर के नितिन ने प्रथम पुरस्कार बी.ए. छठे समैस्टर की दीपिका ने द्वितीय पुरस्कार और रिया महाजन ने तृतीय पुरस्कार प्राप्त किया।

प्रो. सोनिया शर्मा ने उपस्थिति का हार्दिक धन्यवाद किया।

शान्ति पाठ से प्रतियोगिता समाप्त हुई।

डी.ए.वी. (मुरलीधर), अम्बाला शहर में हुआ पुरस्कार वितरण

डी.ए.वी. (मुरलीधर) सीनियर सेकेंडरी पब्लिक स्कूल, अम्बाला शहर में गणतंत्र दिवस और वार्षिक पुरस्कार वितरण समारोह का आयोजन किया गया। इस अवसर पर मुख्य अतिथि श्री प्रेम महिन्द्रु तथा विशिष्ट अतिथि डॉ राजेश शर्मा (प्राचार्य डी.ए.वी. कॉलेज) थे। दीप प्रज्ज्वलित कर डी.ए.वी. गान किया गया और अतिथियों का वैदिक स्वागत ओ३म पट प्रदान कर किया गया।

स्कूल प्राचार्य डॉ आर आर सूरी ने सभी को गणतंत्र दिवस की शुभकामनायें देते हुए कहा मुरलीधर डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल **'तमसो मा ज्योतिर्गमय'** के सिद्धांत पर चलकर एक गुणात्मक शिक्षा प्रदान कर रहा है। विद्यार्थियों को आधुनिक सुविधाओं के साथ नैतिक मूल्यों भरे वातावरण में शिक्षा प्रदान की जा रही है जिससे स्कूल सफलता की ओर तथा कई उपलब्धियों के साथ आगे बढ़ रहा है। उन्होंने बताया कि स्कूल के मेधावी छात्रों ने 98.6 तथा 99.2 प्रतिशत अंक लेकर संस्था का गौरव बढ़ाया है। छात्र कलाकारों ने हरियाणवी नृत्य में अपना सिक्का जमाया है। स्कूल में विभिन्न क्लबों द्वारा विभिन्न प्रतियोगिताएं करवाई जाती है तथा समय समय पर स्पेशल असेंबली तथा थीमेटिक भी करवाई जाती है।

बच्चों ने अपने नृत्य द्वारा अनेकता में एकता का सुन्दर प्रदर्शन किया। हरियाणवी लोक नृत्य, क्लासिकल डांस तथा वेस्टर्न सांग की भी मनमोहक प्रस्तुति दी गई। कार्यक्रम में पधारे मुख्य अतिथि ने विद्यालय की पत्रिका रिफ्लेक्शन का विमोचन किया जिसमें स्कूल की उपलब्धियों का उल्लेख है।

महान संगीतज्ञ बुद्ध राम जी को स्कूल द्वारा सम्मानित किया गया।

मुख्य अतिथि श्री प्रेम महेन्द्रु ने गणतंत्र दिवस की शुभकामनायें दीं तथा स्कूल की उपलब्धियों के लिए सभी शिक्षकों की सराहना की। अंत मे सभी को मत का सही उपयोग करने की शपथ दिलाई गई।

डी.ए.वी. कालेज नकोदर में ऋषिबोधोत्सव पर ग्यारह कुण्डीय यज्ञ

के.आर.एम. डी.ए.वी. कालेज, नकोदर में आर्य समाज मंदिर नकोदर के सहयोग में महर्षि दयानन्द सरस्वती के 196वीं वर्ष जयन्ती के अवसर पर ऋषिबोधोत्सव आयोजन किया गया। मुख्यातिथि के तौर पर प्रसिद्ध आर्य श्री कुन्दन लाल, उपस्थित तथा लायन अकाश चन्द्र, भल्ला, प्रधान, लायस क्लब नकोदर (ग्रेटर) व लोकल मैनेजमैंट कमेटी के प्रधान सोमदत मेहता विशेष मेहमानों के तौर पर शामिल हुए।

इस अवसर पर 11 कुण्डीय यज्ञ किया गया, जिसमें सभी ने समाज की उन्नति के लिए प्रार्थना की और यज्ञ में आहुतियाँ डाली।

मुख्यातिथि श्री कुंदन लाल ने अपने उद्बोधन में कहा कि हमें महर्षि दयानन्द के जीवन से प्रेरणा लेनी चाहिए और उन के बताए ऊसूलों पर चलना चाहिए। डॉ. सनिल कुमार द्वारा संपादित की एक किताब 'वैदिक यज्ञ विधि' का लोकार्पण किया गया। डॉ. अनूप कुमार ने कहा कि डी.ए.वी. कालेज नकोदर व आर्य समाज मंदिर नकोदर द्वारा समाज सेवा के कार्यों में हमेशा ही बढ़–चढ़कर किए जा रहे सहयोग

शेष पृष्ठ 11 पर

स्वजातीय या विजातीय ईश्वर अथवा अपने आत्मा में तत्त्वान्तर वस्तुओं से रहित एक होने से वह 'अद्वैत' है। – स. प्र. समु. ९

संपादक – पूनम सूरी

ओ३म्
आर्य जगत्

सप्ताह रविवार, 23 फरवरी 2020 से 29 फरवरी 2020

हम तेरे सम्मुख मूढ़ हैं

●डॉ. रामनाथ वेदालंकार

मूरा अमूर न वयं चिकित्वो, महित्वमग्ने त्वमङ्ग वित्से।
शये वव्रिश्चरति चिह्वयाऽदन्, रेरिह्यते युवतिं विश्पतिः सन्।।

ऋग् १०.४.४

ऋषिः **त्रितः आप्त्यः**। देवता **अग्निः**। छन्दः **त्रिष्टुप्**।

● (**अङ्ग**) हे, (**अमूर**) अमूढ़, (**चिकित्वः**) ज्ञानी, (**अग्ने**) परमेश्वर!, (**मूराः**) मूढ़, (**वयं**) हम, (**महित्वं**) महत्ता को, (**न**) नहीं [जान पाते]।, (**त्वं**) तू, (**वित्से**) जानता है। [हमारा], (**वव्रिः**) रूपवान् आत्मा, (**शये**) सोया पड़ा है, (**जिह्वया**) जिह्वा [आदि इन्द्रियों] से, (**अदन्**) भोग करता हुआ, (**चरति**) विचरता है, (**विश्पतिः सन्**) राजा होता हुआ [भी], (**युवतिं**) प्रकृति–रूप युवति को, (**रेरिह्यते**) अतिशय पुनः–पुनः चाट रहा है।

● हे अग्ने! हे तेजोमय ज्ञानी प्रभु! हम मूढ़ हैं, तुम अमूढ़ हो। हम तो यह भी नहीं जानते कि 'महत्ता' किसका नाम है, महत्त्व प्राप्त करना किसे कहते हैं। हम तो समझते हैं कि सांसारिक दृष्टि से महिमाशाली होना, हाथी, घोड़े, रथ, सेवक आदि का स्वामी हो जाना ही महत्ता है। हमारा तो विचार है कि नचिकेता को यम ने जिस सांसारिक धन–दौलत, पुत्र–पौत्र, भूमि के राज्य आदि सम्पत्ति के प्रलोभन में फँसाना चाहा था, उस सम्पत्ति को पा लेना ही महत्ता है। पर हम मूढ़ अज्ञानियों के ऊपर रहनेवाले अमूढ़ ज्ञानी तुम जानते हो कि सच्ची 'महत्ता' क्या है।

हमारा रूपवान् आत्मा सोया पड़ा है, उसे यही चेतना नहीं है कि मैं किसलिए इस शरीर में आया हूँ, मेरा लक्ष्य क्या है मुझे किधर जाना है। वह जिह्वा आदि इन्द्रियों से निरन्तर भोगों को भोगने में आसक्त हुआ विचर रहा है और इस भोग भोगने में ही अपने जीवन की इतिश्री मान बैठा है। भगवान् ने उसे 'विश्पति' बनाया है, शरीर–नगरी का राजा बनाया हैं, जिसमें मन, बुद्धि, प्राण, इन्द्रियाँ आदि अनेक प्रजाएँ निवास करती हैं। उसे इस शरीर–नगरी को ईश्वरीय साम्राज्य बनाना चाहिए था, अध्यात्म–साधना द्वारा आध्यात्मिक दृष्टि से उन्नत राष्ट्र बनाना चाहिए था। शरीर–राष्ट्र को भोगों से जर्जर न कर सबल, सप्राण और समनस्क करना चाहिए था। पर धिक्कार है इस आत्मा को! यह तो एक 'युवति' को चाट रहा है, अतिशय पुनः–पुनः चाट रहा है। प्रकृति ही यह युवति है जो नटी बनकर आत्मा को अपने साथ नचा रही है, भोग भुगा रही है। आत्मा प्रकृति को चाट रहा है, प्रकृति आत्मा को चाट रही है। इस प्रकार आत्मा लौकिक भोग–विलासों में आनन्द ले रहा है।

हे मेरे आत्मन्! इस मूढ़ता को त्यागो, अपने अन्दर ज्ञान की ज्योति जगाओ, 'सच्ची महत्ता क्या है' इसे जानो, सोते से उठ खड़े हो, इन्द्रियों के वशीवर्ती न हो, अपितु इन्द्रियों के स्वामी बनो। प्रकृति को न चाटकर परम प्रभु के अमृत–रस का आस्वादन करो। तुम्हारा उद्धार होगा, तुम महिमाशाली बन जाओगे।

❑

वेद मंजरी से

इस अंक में प्रकाशित सभी लेखों में व्यक्त भावों व विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं और इसमें किसी आपत्तिजनक बात के लिए 'सम्पादक' एवं 'आर्य जगत्' उत्तरदायी नहीं होगा।

प्रभु दर्शन

● **महात्मा आनन्द स्वामी**

पिछले अंक में महात्मा आनन्द स्वामी ने बताया कि हम सफलता तो चाहते हैं, परन्तु सफलता की कुञ्जी की ओर ध्यान नहीं देते। हम शान्ति चाहते है, परन्तु शान्ति के आधार को भुला दिया है, सफलता और शान्ति के वास्तविक साधन आत्म–दर्शन को भूलकर हम अन्य साधनों में व्यस्त हैं। यही कारण है कि इतने परिश्रम और पुरूषार्थ के बावजूद हम इस ध्येय से कोसों दूर हैं। न केवल दूर हैं, अपितु मार्ग से भटक गए हैं। शान्ति के नाम पर भीषण विनाशकारी शस्त्रास्त्र तैयार कर रहे हैं। ऋषि ने राजनीति में भाग लेने वालों, राज्य मन्त्रियों, प्रधानमन्त्रियों और राष्ट्रपति को भी आत्मदर्शी, योगाभ्यासी तथा जितेन्द्रिय होने का आदेश दिया है। आज भारत स्वतंत्र है और स्वतंत्र देश होना चाहिए, परन्तु इसकी दुःख की मात्रा कुछ बढ़ ही गई है। ***–अब आगे...***

दृढ़ संकल्प

संकल्प की शक्ति महान् है।

यदि संकल्प दृढ़ हो तो यह शक्ति अजेय है। यदि संकल्प सत्य और शिव भी हो, तो करबद्ध सफलता चरण चूमती है। संकल्प और तद्वत् कर्म मानव को संसार का स्वामी बना देते हैं। शाण्डिल्य ऋषि के शब्दों में '**ऋतुमयः पुरुषः**' और '**कृतं लोकं पुरुषोऽभिजायते**' अर्थात् पुरुष अपने इरादों का बना हुआ है और अपने ही रचे हुए इस संसार में वह जन्म लेता है। पिप्पलाद ऋषि का भी यही कथन है। प्रश्नोपनिषद् के तीसरे प्रश्न के उत्तर में ऋषि कहते हैं–

यच्चित्तस्तेनैष प्राणमायाति
प्राणस्तेजसा युक्तः।
सहात्मना यथा संकल्पितं लोकं नयति।।
3।10।।

"यह आत्मा जिस संकल्पवाला होता है, उस संकल्प के साथ मुख्य प्राण में स्थिर हो जाता है। मुख्य प्राण तेज़ से युक्त हो, मन इन्द्रियों से युक्त (जीवात्मा को) उसके संकल्पों के अनुसार भिन्न–भिन्न लोकों अथवा योनियों में ले जाता है।"

गीता का भी आदेश है कि अन्त समय आत्मा का जैसा संकल्प होता है, इसका मन जिस भाव का चिन्तन करता है, वह वैसे ही संसार को प्राप्त कर लेता है।

संकल्प अर्थात् धारणा, विचार, भावना। जैसे आपके मन के विचार और भावनाएँ हैं, आपका वातावरण वैसा ही बनता चला जायेगा। यह वातावरण आपके जीवन को, आपके परिवार को, आपके समाज और देश को, राष्ट्र और संसार को विशेष साँचों में ढाल देता है। आखिर यह सब–कुछ क्या है? कुछ संकल्प, कुछ विकल्प। संकल्प–विकल्प के अनुरूप आप प्रभावित होते हैं, आपके सम्बन्धी और मित्र प्रभावित होते हैं। यदि आपके संकल्प में पवित्रता, आशा, उल्लास, प्रेम, प्रसन्नता और उत्साह एवं आत्मविश्वास की भावनाएँ हैं तो आपको अपने चारों ओर आपको यही कुछ दिखाई देगा। आपका वातावरण इन्हीं साँचों में ढलेगा। यदि आपके संकल्प में नीचता, निराशा, घृणा, चिन्ता, राग, वैमनस्य, शत्रुता और निरुत्साह की भावनाएँ हैं, तो लाख प्रयत्न करने पर भी आप इन्हीं से घिरे रहेंगे। केवल प्रभु–दर्शन के लिए ही नहीं, किसी भी शुभ काम में सफलता प्राप्त करने के लिए जरूरी है कि संकल्प दृढ़, सत्य और शिव हो। मेरा विश्वास है कि जिसका मन रोगी नहीं, उसका तन कभी रोगी नहीं होता। जिसका मन हँसता है, उसके होंठ कभी नहीं रोते। तन बड़ा दिखता है, परन्तु मन बहुत बलवान् है। अस्वस्थ तन में स्वस्थ मन तो रह सकता है, परन्तु अस्वस्थ मन तन को कभी स्वस्थ नहीं रहने देता। छान्दोग्य–उपनिषद् में स्पष्ट कहा है कि दृढ़ संकल्पवाला पुरुष 116 वर्षों तक जीवित रह सकता है। इसका कोई गूढ़ रहस्य नहीं, साधारण ज्ञान है कि पुरुष अपने–आपको यज्ञ–रूप बनाने का दृढ़ संकल्प करे। वह यज्ञरूप बन जाये। पुरुष यज्ञ ही तो है! **"पुरुषो वाव यज्ञः।"** अपने आपको यज्ञरूप समझकर पुरुष संकल्प करे कि जब तक जीवन का यज्ञ पूर्ण नहीं हो जाता, तब तक मैं रोगी नहीं होऊँगा; दुःखी नहीं होऊँगा। ऐसे दृढ़ संकल्पवाले पुरुष के समीप रोग और दुःख क्या, मृत्यु भी नहीं आती। इन सबको परास्त कर वह यज्ञ को पूर्ण कर लेता है। यह कोरी कल्पना ही नहीं, इतिहास की एक घटना है। महिदास ऐतरेय को भीषण रोग ने आ दबाया। उसका तन रोगी हो गया, परन्तु मन स्वस्थ रहा। उसने रोग को चुनौती दी। कहा –

स किं म एतदुपतपसि, योऽहमनेन
न प्रेष्यामीति।

"रे रोग! क्या तू मुझे तपा रहा है। मैं तुझसे नहीं मरूँगा।" और वह नहीं मरा। 116 वर्ष तक जीता रहा। यह मार्ग बन्द नहीं हुआ, अब भी खुला है। जो व्यक्ति 116 वर्ष तक सुखी और सन्तुष्ट जीवन बिताना चाहता है, वह इस मार्ग पर चले। वह सत्य, शिव और सुन्दर संकल्प करे।

परन्तु आजकल संसारी लोगों की

शेष पृष्ठ 04 पर ☞

स्वामी दयानन्द की दो भारी भूलें

● स्मृति शेष गंगा प्रसाद उपाध्याय

आर्यसमाज की ख्याति दिन–प्रतिदिन बढ़ती जा रही है और हिन्दू जाति के सभी प्रसिद्ध नेता मुक्त कण्ठ से इसके कामों की प्रशंसा करते हैं। स्वामी दयानन्द की महत्ता का प्रभाव भारतवर्ष के प्रत्येक प्रान्त में फैलता जा रहा है। परन्तु लोगों की दो बड़ी शिकायतें हैं। वे कहते हैं कि यदि स्वामी दयानन्द इन भूलों को न करते या अब भी आर्यसमाज इनका निराकरण कर दे तो समस्त भारतवर्ष आर्यसमाज के झण्डे के नीचे आ जाय।

पहली भूल है **मूर्तिपूजा–खण्डन**। स्वामी जी के जीवन में भी लोग उनकी विद्या की प्रशंसा सुनकर उनकी ओर आकर्षित हो जाते थे, परन्तु मूर्तिपूजा का खण्डन सुनते ही उनसे शत्रुता करने लगते थे। एक मन्दिर की लाखों रुपये की गद्दी उनको मिलनेवाली थी। परन्तु शर्त यह थी कि मूर्ति का खण्डन छोड़ दो, चाहे स्वयं न पूजो। स्वामी दयानन्द ने भूल की और यह शुभ अवसर हाथ से खो दिया। यदि यह रुपया उनके पास होता तो वह बहुत–सी पुस्तकें लिख और छपवा सकते थे। बड़े–बड़े राजाओं को अपने शिष्य बना सकते थे। पण्डितवर्ग की शत्रुता से बच सकते थे। समस्त हिन्दू जाति को एक झण्डे के नीचे करके स्वराज्य प्राप्त कर सकते थे। हमने सैकड़ों लोगों को कहते सुना है कि आर्यसमाज बड़ा अच्छा है, परन्तु यही एक बुरी बात है कि मूर्ति का बेढब खण्डन करते हैं और देवी–देवताओं को नहीं मानते।

दूसरी भूल है **वेदों को ईश्वरीय ज्ञान मानना**। बाबू केशवचन्द्र सेन बंगाल के प्रसिद्ध ब्रह्मसमाज के नेता और बम्बई प्रान्त के प्रसिद्ध प्रार्थना–समाज के कार्यकर्त्ता मूर्ति–खण्डन के पक्ष में थे। वे स्वामी जी के प्रतिमा–पूजन–खण्डन की प्रशंसा करते थे, परन्तु वे वेदों को ईश्वरीय ज्ञान नहीं मानते थे; इसीलिए ब्रह्मसमाज और प्रार्थना–समाज, आर्यसमाज के साथ न मिल सके। यदि ये तीनों समाज मिल जाते तो देश का कितना उद्धार होता। थियोसोफीकल समाज (Theosophical Society) के प्रसिद्ध नेता कर्नल अलकाट (Colonel Olcatt) और मैडम ब्लैवेट्स्की (Madam Blavatsky) स्वामी जी को अपना पूज्य गुरु मानते थे और अपने को उनका तुच्छ सेवक बताने के लिए तैयार थे, परन्तु वेदों के ईश्वरीय होने के प्रश्न ने उनको भी अप्रसन्न कर दिया और थियोसोफीकल सोसायटी सदा के लिए आर्यसमाज से अलग हो गई। आजकल भी शिक्षित लोग स्वयं आर्यसमाज के सभासद् होने में यही आपत्ति करते हैं कि स्वामी दयानन्द ने वेदों को ईश्वरीय ज्ञान मानकर आर्यसमाज को संकुचित (Dogmatic) बना दिया।

स्वामी दयानन्द ने ये भूलें क्यों कीं? क्या वे हठी थे? नहीं, बाबू केशवचन्द्र सेन के कहने से ही उन्होंने संस्कृत के बजाय हिन्दी में बोलना आरम्भ किया था। भरी सभाओं में भी वे अपनी भूल झट स्वीकार कर लेते थे। फिर ऐसे महात्मा से भूलें कैसे हो गईं? हम यहाँ इसी की मीमांसा करते हैं।

पहले याद रखना चाहिए कि दो शिकायतें दो भिन्न–भिन्न दलों की ओर से हैं। केशवचन्द्र सेन आदि मूर्तिपूजा के बड़े विरोधी थे। यही एक कारण था कि उन्होंने स्वामी दयानन्द का इतना मान किया। परन्तु, यदि स्वामी दयानन्द इन लोगों के लिए वेदों के ईश्वरीय होने की बात को अलग भी रख देते, तो भी समस्त हिन्दू जनता उनके साथ न हो जाती क्योंकि वह मूर्तिपूजा छोड़ना नहीं चाहती थी। एक दल मूर्तिपूजा–खण्डन के पक्ष में और वेदों का विरोधी था, दूसरा मूर्तिपूजा–खण्डन से चिढ़ता था परन्तु वेदों को मानता था, अतः यदि स्वामी दयानन्द चाहते भी, तो भी दोनों को प्रसन्न करना सम्भव न था।

हाँ, एक सभा ऐसी थी जिसने इन दोनों दलों की बात मान ली, वह थी थियोसोफीकल सोसायटी। उन्होंने शिक्षित समाज से कहा "कुछ परवाह नहीं, यदि तुम वेदों को नहीं मानते तो न मानो, हमारी सभा के तुम सभासद् हो सकते हो।" साधारण जनता से कहा, "मूर्तिपूजा करने में क्या हानि है? यह तो एक प्रकार की जनता के लिए परमावश्यक है। यदि तुम मूर्तिपूजा छोड़ने के योग्य नहीं हो तो कदापि न छोड़ो। हमारी सभा के सभासद् हो जाओ।"

स्वामी दयानन्द या उनके अनुयायियों ने इस चातुर्य्य से काम नहीं लिया और न यह अब ले रहे हैं। इसीलिए संसार इनका शत्रु हो रहा है। क्या यह बड़ी भारी भूल नहीं है?

मूर्तिपूजा के प्रश्न को लीजिए। प्रथम तो प्रश्न यह है कि क्या मूर्तिपूजा से ईश्वर की प्राप्ति हो सकती है? हम 'मूर्तिपूजा' नामक ट्रेक्ट में दिखा चुके हैं और आर्यसमाज के कई ग्रन्थों में भली प्रकार दर्शाया जा चुका है कि मूर्तिपूजा और ईश्वर–प्राप्ति इन दोनों का परस्पर कोई सम्बन्ध नहीं। इसलिए जब स्वामी दयानन्द को विश्वास हो गया कि मूर्तिपूजा ईश्वर–प्राप्ति में साधक नहीं किन्तु बाधक है तो उस समय वह किसी प्रकार भी मूर्तिपूजा–खण्डन को नहीं छोड़ सकते थे। वह खुली आँखों से देख रहे थे कि इसी मूर्तिपूजा के कारण लोग अपने परमपिता जगदीश्वर को भूल गए और पाषाण आदि की मूर्तियों को ही जगदम्बा और जगदीश्वर पुकारने लगे। फिर अन्य निर्बल आत्माओं के समान वे संसार के साथ इस बात में समझौता कैसे करते?

परन्तु प्रश्न यह है कि इस प्रकार के समझौते में क्या हानि थी? यदि देश और जाति के सुधार के लिए ऐसा समझौता कर लिया जाता तो क्या बुराई हो जाती? ऐसे महात्माओं की संख्या कम नहीं है जिनके वचनों में खण्डन पाया जाता है, परन्तु उन्होंने कभी मन्दिरों या मूर्तियों के विरुद्ध इतना आन्दोलन नहीं किया। जहाँ प्रतिमा–पूजन के खण्डन में उन्होंने बहुत–कुछ लिखा, वहाँ गृहस्थों को मूर्तिपूजन से रोका भी नहीं। कबीर, दादू, नानक, तुकाराम आदि कई ऐसे महापुरुष हुए। उन्होंने हिन्दू जाति को बहुत लाभ पहुँचाया और हिंदू जाति कभी रुष्ट नहीं हुई। मतभेद और बात है।

इसका कारण साधारणयता लोगों की समझ में नहीं आता। हम मानते हैं कि कबीर, तुकाराम आदि महात्माओं ने हिन्दू जाति का बहुत कुछ उपकार किया, परंतु इसमें भी संदेह नहीं कि उनका वह उपकार क्षणिक था। वे हिन्दू जनता से मूर्तिपूजा के रोग को हटा नहीं सके। स्वयं उनके सामने और उनके पीछे उनके अनुनायियों तक में मूर्तिपूजा अपने भयंकर रूप के साथ बनी रही। दूसरे यह कि शायद इन महात्माओं ने मूर्तिपूजा के रोग को इतना भीषण नहीं समझा कि उसके निवारण के लिए अपना सर्वस्व अर्पण कर दें।

स्वामी दयानन्द मूर्तिपूजा को न केवल अनावश्यक ही किन्तु एक भयंकर रोग समझते थे जिसके होते हुए सर्वप्रकार की उन्नति असम्भव थी। आजकल शिक्षित समाज की समझ में यह बात नहीं आती। वे स्वयं चाहे मूर्ति न पूजें परन्तु इनकी इतनी असंख्य जनता को मूर्ख कैसे बताया जा सकता है। उनका कथन है कि मूर्तिपूजा को बन्द कर दो। जैसे कहीं बकरे मारे जाते हैं, कहीं भैंसों की बलि दी जाती है, कहीं सुअर का घेंटा कटता है–ये अवश्य बुरी चीजें हैं। परन्तु यदि कोई पुरुष मंदिर में जाकर श्रीकृष्ण या राम की मूर्ति बनाकर शुद्ध चिंतन करता है तो इसको इतना घृणित क्यों माना जाय?

खेद से कहना पड़ता है कि इन लोगों ने मूर्तिपूजा की भीषणता पर कभी ध्यान नहीं दिया। वे यदि मूर्तिपूजा पर विश्वास नहीं भी रखते तो उसे इतना भयानक नहीं समझते। परन्तु जिसको ये लोग शुद्ध मूर्तिपूजा कहते हैं वही घृणित मूर्तिपूजा का बीजरूप है। जब तक बीज नष्ट नहीं किया जाएगा तब तक वृक्ष की डालियों को काटते रहना बुद्धिमता नहीं है। चाहे हिन्दू जाति मूर्तिपूजा छोड़कर मिले या न मिले। हमारा विचार तो यह है कि जब तक इसमें मूर्तिपूजा का लवलेश उपस्थित है तब तक इसकी कुप्रथाएँ दूर नहीं हो सकती और यह काल के गाल से नहीं बच सकती। इसका कौन–सा रोग है जिसको आप बिना मूर्तिपूजा–खण्डन से दूर कर लेंगे? इसका करोड़ों रुपया प्रतिवर्ष मन्दिरों पर व्यय होता है। अनाथ चिथड़ों को तरसते हैं और मूर्तियाँ मखमल की रज़ाइयाँ ओढ़ती हैं। दीन–दुखिया भूख के मारे ईसाई और मुसलमान हुए जाते हैं और पत्थर की प्रतिमाओं के सामने हलुवा रखा जाता है। रोगियों की सुश्रूषा के लिए लोगों के पास समय नहीं, परन्तु मूर्तिपूजा के लिए घण्टों व्यय किये जायँ। रोग हो तो वैद्यों को छोड़कर मूर्ति के पास भागते हैं। यदि कोई आक्रमण हो तो बाहुबल को त्यागकर मूर्ति का आश्रय लेते हैं। एक–एक मूर्ति पर नित्य झगड़ा होता है, लाठियाँ चलती हैं, मुकद्दमे होते हैं। यह सब मूर्तिपूजा की करतूतें हैं। फिर इसके अतिरिक्त जितने प्रकार के मिथ्या विचार (Superstitions) हैं उन सबकी जड़ भी मूर्तिपूजा ही है। जो पुरुष पत्थरों से डर सकता है वह किससे नहीं डरेगा? जिसके हृदय में झाड़–झंखाड़ के लिए पूज्य बुद्धि है वह किस जीवित शत्रु का सामना कर सकेगा? फिर हिन्दुओं के अपने धर्म को छोड़कर दूसरे धर्म में चले जाने का कारण भी मूर्तिपूजा ही है। नित्य ईसाई तथा मुसलमान बहकाते हैं और हिन्दुओं की संख्या कम होती जाती है।

हिन्दुओं में परस्पर कलह का कारण मूर्तिपूजा ही है। कहीं शिवलिंग की मूर्ति, कहीं विष्णु की मूर्ति, एक–दूसरे का परस्पर विरोध है। दक्षिण में वासतोल (व्यास की भुजा) की मूर्ति ही लिंगायतों और अन्य हिन्दुओं में शत्रुता का कारण है। स्पृश्य जाति के उद्धार में भी उस समय तक उन्नति न होगी जब तक लोग मूर्तियाँ पूजते रहेंगे। आजकल नित्य यत्न होते हैं कि अपृश्यों को मन्दिरों में जाने की आज्ञा देनी चाहिए। पण्डे लोग घोर विरोध करते हैं और यदि दपसठ में आकर आज्ञा दे भी देते हैं तो फिर मन्दिरों को गंगाजल से शुद्ध कर लिया जाता है। ये यत्न व्यर्थ हैं। स्वामी दयानन्द की भाँति स्पष्ट कह दो कि मूर्तिपूजा हटा दी जाए। जब अस्पृश्य जाति के घर में भी ईश्वर का प्रकाश है तो इस प्रकाश के बल से ही वे समस्त संसार को जीत सकते हैं। यदि मन्दिरों का बखेड़ा इनके साथ लगा रहा तो इनमें कभी शक्ति नहीं आने की। मूर्तियाँ क्या सिखाती हैं? ये शक्ति नहीं देतीं, प्रत्युत निर्बल बनाती हैं, इसलिए इनके पूजक भी निर्बल ही रहते हैं और रहेंगे। मूर्तिपूजा–खण्डन में स्वामी दयानन्द ने भूल नहीं की, किन्तु विशेष धैर्य और प्राबल्य का परिचय दिया है।

क्रमशः

गंगा–ज्ञान–सागर से साभार

ऋषि दयानन्द की खरी-खरी बातें

● स्मृति शेष डॉ. भवानीलाल भारतीय

यहाँ हम देवेन्द्रनाथ मुखोपाध्याय द्वारा आंशिक रूप से लिखे गये तथा बाद में पं. घासीराम द्वारा पूर्ण किये गये दो खण्डों में प्रकाशित "महर्षि दयानन्द का जीवनचरित" (प्रथम बार 1933 में प्रकाशित) से संकलित 'खरी खरी बातों की द्वितीय किस्त प्रस्तुत कर रहे हैं।

'अन्नदाता' परमात्मा ही है

स्वामी दयानन्द करौली के राजदरबार में विराजमान थे। उस समय एक पण्डित ने आकर महाराजा मदनपाल को 'अन्नदाता' कह कर आशीर्वाद दिया। इसे सुनकर स्वामी जी चट बोल उठे-"परमेश्वर से भिन्न कोई मनुष्य अन्नदाता नहीं हो सकता।"

सभी मनुष्य पापी नहीं होते

अजमेर में जब पादरी रॉबिन्सन से स्वामी जी की धर्म-चर्चा चल रही थी, पादरी ने कहा-"मनुष्य मूलतः पापी है।" इस पर स्वामी जी ने पूछा-"क्या तुम भी पापी हो।" पादरी ने स्वयं को पापी होना स्वीकार किया तो स्वामी जी ने इस विचारधारा का प्रतिवाद करते हुए कहा-"कुछ लोग पापी हो सकते हैं, सभी मनुष्य पापी हैं, यह कथन बुद्धिमतापूर्ण नहीं है।"

यज्ञोपवीत उतारा भी जाता है

पं. गंगाप्रसाद ने स्वामी जी से कहा कि मैंने अनेक लोगों को यज्ञोपवीत धारण कराया है। स्वामी जी ने इसे सुनकर प्रसन्नता प्रकट की। साथ ही कहा -"यज्ञोपवीत देते ही जाते हो या किसी से उतरवाते भी हो।" इस पर पण्डित जी आश्चर्य में पड़ गये और पूछा-"क्या यज्ञोपवीत उतरवाये भी जाते हैं?" स्वामी जी ने कहा-"हाँ, यदि कोई अधर्माचरण करने लगे तो उसका यज्ञोपवीत उतरवा लेना चाहिए।"

व्यवसाय में ईमानदारी रखने से कल्याण

एक अनपढ़ धुनिया (रुई धुनने वाला) स्वामी जी की सेवा में आकर पूछता है-"महाराज मुझ जैसे अज्ञानी जीव का कल्याण कैसे होगा?" उत्तर में महाराज ने कहा-"ओम् का जप करो, व्यवहार में सच्चे रहो। जितनी रुई ग्राहक से धुनने के लिए लाओ उतनी ही धुनकर उसे लौटा दो। इसी में तुम्हारा कल्याण निहित है।"

हस्तरेखा शास्त्र झूठा है

एक मनुष्य ने स्वामी जी को अपना हाथ दिखाया और अपना भविष्य जानना चाहा। उत्तर में महाराज ने कहा-"तुम्हारे हाथ में चर्म, अस्थि और रुधिर है, इसमें कुछ भविष्य नहीं लिखा। जन्मपत्र मिथ्या है, कर्मपत्र (पुरुषार्थ) ही श्रेष्ठ है।"

हमें वेद-प्रचार में आनन्द आता है

मायाराम उदासीन साधु ने स्वामी जी से कहा-"आप मूर्तिपूजा के खण्डन के बखेड़े में क्यों पड़े? हमारी भाँति भोजन करो और आनन्द मनाओ।" स्वामी जी ने उत्तर दिया-"हमें ईश्वराज्ञा के पालन तथा वेद के प्रचार में आनन्द आता है, मुफ्त की रोटियाँ तोड़ना पुरुषार्थ नहीं है।"

महाभारत से मूर्तिपूजा सिद्ध नही होती

पं. उमादत्त ने महाभारत में आये एकलव्य उपाख्यान का उदाहरण दिया और कहा कि उस व्यक्ति ने द्रोणाचार्य की मूर्ति की पूजा की। उत्तर में स्वामी जी ने कहा कि एकलव्य को धनुर्विद्या में निपुणता अभ्यास से प्राप्त हुई न कि मूर्ति की पूजा से। यह भी कहा कि एक अशिक्षित और जंगली भील का कार्य दृष्टान्त नहीं बनता।

हमारा शुक्र कभी अस्त नहीं होता

जब स्वामी जी ने फर्रुखाबाद के वैश्यों को यज्ञोपवीत धारण कराया तो पौराणिकों ने कहा कि यह कार्य अनिष्टकारी होगा। प्रथम तो इसमें गणेशपूजा नहीं की गई और दूसरे, यह कार्य शुक्रास्त के समय हुआ है। स्वामी जी ने कहा-"गणेश पूजा का विधान वेदोक्त नहीं है और हम तो शुक्ररूपी ब्रह्म के उपासक हैं जो कभी अस्त नहीं होता।"

परिश्रम और ईमानदारी से उपार्जित धन से प्राप्त भोजन ग्राह्य है

फर्रुखाबाद जिले में रहने वाली साध जाति को उच्च वर्ण के लोग हेय दृष्टि से देखते थे। इसी जाति का सुखवासी लाल स्वामी जी के लिए कढ़ी और भात का भोजन तैयार कर लाया। महाराज ने सहर्ष भोजन किया। इस पर लोगों ने जब आपत्ति की और कहा कि आपने निम्न जाति के व्यक्ति द्वारा परोसा भोजन किया है तो उत्तर में स्वामी जी ने कहा कि भोजन दो प्रकार से दूषित माना जाता है। प्रथम किसी को दुःख देकर धन प्राप्त किया जाये और अधर्म की कमाई से भोजन बने, दूसरे, उसमें कोई मलिन वस्तु गिर जाये। साध लोग परिश्रम और ईमानदारी से जीविकोपार्जन करते हैं अतः उनका लाया भोजन ग्राह्य है।

8/423 नन्दन वन
जोधपुर, राज.

☞ पृष्ठ 02 का शेष

प्रभु दर्शन

अवस्था इससे सर्वथा भिन्न है। चिन्ता, रोग, ईर्ष्या, द्वेष तथा अन्य नीच संकल्पों ने जन-समुदाय को घेर रखा है। यही कारण है कि राग उत्तरोत्तर बढ़ रहे हैं। विज्ञान नित्य नये आविष्कार करता है, भीषण-से-भीषण रोगों का इलाज खोजता है, तो भी रोग कम नहीं होते; बढ़ते ही जाते हैं। यही अवस्था अन्य व्याधियों की है। जितने इलाज खोजे जाते हैं उतनी ही व्याधियाँ बढ़ जाती हैं। इसका सबसे बड़ा कारण संकल्प की अपवित्रता, भावना की अशुद्धता है और यह आधुनिक सभ्यता की देन है। अमेरिकन लेखक श्री ओरिसन स्वेट मार्डन ने लिखा है कि "आधुनिक सभ्यता ने, जिसे 'हायर सिविलाइज़ेशन' कहा जाता है, सबसे बुरी बात यह है कि मानव के उस पवित्र विश्वास की हत्या कर दी है जिसके द्वारा रोगों को दूर रखा जा सकता था। अब बड़े-बड़े नगरों में लोग बीमारियाँ लाने की तैयारियाँ करते हैं और वे इनकी आशा रखते हैं, प्रतीक्षा करते हैं, और आखिरकार, रोग आ ही जाते है।" (They expect it, anticipate it and consequently have it.)

रोग रोकने का सबसे बड़ा साधन यही है कि रोग के विचार को मन में न आने दिया जाये। स्वस्थ विचार संसार की अमूल्य सम्पत्ति हैं। स्वस्थ रहने के लिए सबसे बड़ा और अचूक साधन यही है कि मन को अपवित्र संकल्पों से शुद्ध रखो। यह एक ऐसी ओषधि है, जिससे भयंकर रिसते घाव भी भर सकते हैं। दूषित भावना और मानसिक चिन्ता अनेक रोगों का कारण बनती है। डॉक्टर स्नो लिखते हैं -

"जिन लोगों को कैंसर हुआ, उनके सम्बन्ध में अन्वेषण करने से पता लगता है कि अधिकांश रोगियों की अवस्था में, विशेषतया उन रोगियों की अवस्था में जिन्हें वक्ष-स्थल अथवा मूत्राशय में कैंसर के रोग से पीड़ित होना पड़ा, कैंसर का असली कारण मानसिक चिन्ता तथा व्याकुलता थी। डॉ. चर्टन ने 'ब्रिटिश मैडिकल जर्नल' में अपने अन्वेषण की घोषणा करते हुए स्पष्टतया लिखा है कि चिन्ता से पाण्डुरोग का उत्पन्न होना निश्चित-सा ही है। एक और योग्य डॉक्टर श्री मर्चीसन कहते हैं-'जब कभी मैं देखता हूँ कि जिगर में कैंसर होने वाले कितने ही रोगियों के रोग का वास्तविक कारण उनका बहुत देर तक दुःख तथा चिन्ता के सागर में डूबे रहना है, तो मुझे आश्चर्य होता है। इतने अधिक रोगियों की अवस्था में मैंने यह बात देखी है कि इसे केवल इत्तिफ़ाक़ (संयोग) का नाम देना उचित नहीं है'... भावातिरेक का मनुष्य के चमड़े पर भी गम्भीर प्रभाव पड़ता है।" (The most majority of cases of cancer, specially of heart and uterine-cancer, are due to mental anxiety, is reported by Dr. Churten in the British Medical Journal. Dr. Murchison, an eminent authority says-"I have been surprised, how often patients with primary cancer of the liver, have traced the causes of their ill-health to protracted grief or anxiety. The cases have been far too numerous to be accounted for as more coincidences. The functions of the skin are seriously affected by the emotions.")

सर बो. डब्लू. रिचर्डसन अपनी पुस्तक 'फ़ील्ड ऑफ़ डिसीज़िज़' में लिखते हैं-"मानसिक उद्वेग तथा चिन्ता के बाद प्रायः चमड़े पर फुन्सियाँ निकल आती है। ऐसी अवस्थाओं में तथा कैंसर, मिरगी और पागलपन की हालत में मानसिक वातावरण पहले से ही मौजूद रहता है। आश्चर्य की बात है कि शारीरिक रोगों के मानसिक कारणों का सुचारु रूप से अध्ययन करने की चेष्टा अभी तक नहीं की गई। (Sir B. W. Richordson, in his work 'The Field of Diseases' says-"Eruptions of the skin will follow excessive mental strain. In all these and in cancer, epilepsy, and mania from mental causes, there is a pre-disposition. It is remarkable how little question of the origin of physical disease from mental influences has been studied.")

यह तस्वीर का एक रुख है। इसका दूसरा रुख भी है, जहाँ शुभ और सुखद संकल्पों ने जीवन को हर्ष और उल्लास से भरने के अतिरिक्त शक्तिशाली, विशेष बलयुक्त भी बनाया। इस सम्बन्ध में डॉक्टर मार्डन लिखते हैं-

"कितने ही अन्वेषणों में असंदिग्ध रूप से यह बात प्रमाणित हुई है कि मानव-शरीर के सकल जीवन-तन्तुओं को स्वास्थ्यवर्धक, आशामय, आह्लादकारक, प्रोत्साहक, उन्नतिशील, आशावादी और प्रसन्नतामय विचारों से इतनी सहायता मिलती है, जितनी और किसी बात से नहीं। इस प्रकार के विचार जीवन-तन्तुओं को पैदा करते हैं। इनसे उल्टे प्रकार के विचार इन तन्तुओं का नाश करते हैं। मनुष्य अपने शरीर के लिए यदि सबसे बड़ा कोई काम कर सकता है, तो यह कि इन जीवन-तन्तुओं को अधिकाधिक सबल बनाये रखे। ऐसा करने से वह स्वस्थ रहेगा और पूर्णतया स्वस्थ होने पर वह धार्मिक, सत्यवादी, ईमानदार, वफादार और महान् होगा।" ("Innumerable experiments have established the fact that all healthful, hopeful, joyous, encouraging, uplifting, optimistic, cheerful thoughts improve the cell-life of the entire body. They are creative, while the opposite thoughts are destructive of call-lite. The Greatest work a human can do is to keep his entire cell-life in the superbest possible condition. Then he will be absolutely normal, and when normal he will be right, truthful, honest, sincere, noble.") *क्रमशः*

श्रेयश्च-प्रेयश्च

● डॉ. सुरेन्द्र कुमार शर्मा

इसे अजीब संयोग ही तो कहा जायेगा कि अचानक आत्मानन्द जी और विषयानन्द जी दोराहे पर मिल गये। दोनों एक दूसरे को देखकर मुस्कराये।

"यह मार्ग किधर जाता है?" विषयानन्द जी ने आत्मानन्द जी से पूछा।

"मार्ग के बारे में मत पूछिये। पहले यह बताइये कि आपको कहाँ जाना है?" आत्मानन्द जी ने उत्तर दिया।

"यह तो मार्ग की जानकारी प्राप्त करने के बाद ही तय करूँगा कि किधर जाना है।" विषयानन्द जी ने धीरे से कहा।

"सुनिये विषयानन्द जी दो मार्ग हैं। एक मार्ग चढ़ाई की ओर जाता है और दूसरा उतराई की ओर। चढ़ाई की ओर जाने वाले मार्ग को '**श्रेयमार्ग**' कहा जाता है और उतराई की ओर जाने वाले मार्ग को '**प्रेयमार्ग**' कहा जाता है।"

"दोनों मार्गों में अन्तर क्या है?"

"प्रेयमार्ग का अर्थ है–प्रिय लगने वाला मार्ग। प्रायः जनसाधारण इसी मार्ग को अपनाता है। उतराई का मार्ग सबको अच्छा लगता है।"

"प्रेयमार्ग में हमें क्या–क्या देखने के मिलता है।"

"इसमें बहुत कुछ देखने को मिलता है। सबसे पहले आपको बाल्यावस्था की सुन्दर, सुगन्धित, सुरम्य वाटिका देखने को मिलेगी। उसके बाद यौवन का विशाल हरा–भरा वन दृष्टिगत होगा और अन्त में वृद्धा वस्था के एक शान्त, सुशीतल सरोवर पर नजर पड़ेगी जिस पर मुरझाई हुई लताएँ पड़ी होंगी और जिनको काल–यमराज बेरहमी से तोड़ रहा होगा।"

"यदि हम प्रेयमार्ग में बढ़ते हुए कोई गाना, गाना चाहें तो वह कौन सा गाना होगा?"

"वह गाना होगा आज करे सो काल कर, काल करे, सो परसों।

इतनी जल्दी क्यों करें, अभी पड़े हैं बरसों।।"

"श्रेय मार्ग के बारे में कुछ बताइये।" विषयानन्द जी ने जिज्ञासा प्रकट की। "यह मार्ग चढ़ाई वाला है अतः कठिन भी है। इस मार्ग पर प्रत्येक व्यक्ति नहीं जा सकता। इसमें यम–नियमों के सोपान पार करने पड़ते हैं। अहिंसा, सत्य, अपरिग्रह, अस्त्येय, ब्रह्मचर्य, शौच, संतोष, तप, स्वाध्याय, ईश्वर प्राणिधान आदि की छोटी–छोटी सीढ़ियाँ चढ़नी पड़ती हैं। निराशा के अंधकार में आस्था का दीपक साथ लेकर चलना पड़ता है। आसक्ति की ठंड से बचने के लिए वैराग्य की चादर ओढ़नी पड़ती है।"

"पर इतना सब करने से मिलता क्या है?"

"जो मिलता है वह लाजवाब होता है। क्या आपने वह दोहा नहीं सुना–**चढ़े तो पावे प्रेम रस, गिरे तो चकनाचूर।**"

श्रेयमार्ग पर अग्रसर होते हुए पथिक पर ईश्वर कृपा के आनन्द बिन्दु बरसते हैं, उसके शरीर से आध्यात्मिकता की सुगन्ध आती है, उसके लिए मोक्ष के द्वार खुले रहते हैं तथा वह हर पल ईश्वर प्रेम की खुमारी में डूबा रहता है।"

"क्या वह भी कोई गीत गाना चाहता है?"

"हाँ, और उस गीत के बोल हैं–

अब सौंप दिया इस जीवन का, सब भार तुम्हारे चरणों में।

है हार तुम्हारे चरणों में, और जीत तुम्हारे चरणों में।।

"आप जिस श्रेय और प्रेय मार्ग की चर्चा कर रहे हैं उसका कोई आधार भी है या कोरी कपोल कल्पना है?"

"विषयानन्द जी, थोड़ा स्वाध्याय भी कर लिया करो। क्या आपने कठोपनिषद् नहीं पढ़ा? उसमें यमाचार्य नचिकेता को श्रेय और प्रेय मार्ग के बारे में समझाते हैं कि श्रेयमार्ग मनुष्य के लिए क्यों आवश्यक है। विषयानन्द जी, अब तो बता दीजिए कि आप कौन से मार्ग के पथिक बनना चाहेंगे?"

"मैं अभी भी निर्णय नहीं कर पाया?"

"आप निर्णय कर भी नहीं पायेंगे। पर मैं जानता हूँ, आप प्रेयमार्गी हैं।"

"यह आप किस आधार पर कह रहे हैं?"

"आपके नाम के आधार पर। आपका नाम है–विषयानन्द। क्या आप अपने विषयों के बारे में बतायेंगे?"

"मुझे खुद नहीं पता।" विषयानन्द जी ने अनभिज्ञता प्रकट की।

"मैं बताता हूँ...। पाँच विषय होते हैं। इन्हें तन्मात्रायें भी कहते हैं और इनके नाम हैं–रूप, रस, गन्ध, स्पर्श और शब्द। ये सभी प्रेयमार्ग की ओर ले जाते हैं। कभी मनुष्य को रूप (सौन्दर्य) लुकाता है तो कभी रस (आस्वादन) आकृष्ट करता है। कभी गन्ध डोरे डालता है तो कभी स्पर्श नजरें मिलाता है। विषयानन्द जी, आप तो चौबीसों घंटे इन्हीं में फँसे रहते हैं तो आपसे श्रेय मार्ग की उम्मीद कैसे की जा सकती है।"

"पर दुनिया तो प्रेयमार्ग से ही प्यार करती है। दूसरे शब्दों में कहें तो जहाँ विषय है वहीं प्रेयमार्ग है। पर मुझे भी अब श्रेयमार्ग पर बढ़ना पड़ेगा। दूसरे शब्दों में कहूँ तो आत्मानन्द जी, मुझे आपकी राह पर चलना पड़ेगा।"

"अब आए आप रास्ते पर। विषयों में डूबे रहने और प्रेय मार्ग में चलते रहने से मनुष्य अध्यात्म सुख से वंचित रह जाता है। वह आत्मा का आनन्द प्राप्त नहीं कर पाता है और जो आत्मा को ही नहीं पहचान पाया वह परमात्मा तक कैसे पहुँच पाएगा। जीवन का अन्तिम सुख भोग (प्रेय मार्ग) से नहीं योग (श्रेय मार्ग) से संभव है।"

"आत्मानन्द जी, मैं मानता हूँ कि आध्यात्मिक उन्नति के लिए श्रेय मार्ग आवश्यक है लेकिन भौतिक उन्नति के लिए क्या प्रेयमार्ग भी आवश्यक नहीं?"

"विषयानन्द जी, आपका कहना भी ठीक है। भौतिक उन्नति के लिए प्रेय मार्ग भी आवश्यक है। जैसे मनुष्य के लिए शरीर और आत्मा दोनों का होना आवश्यक है वैसे ही जीवन के पूर्ण विकास के लिए श्रेय और प्रेय दोनों होने चाहिए। दूसरे शब्दों में कहें तो आत्मानन्द और विषयानन्द हम दोनों मित्र ही हुए। अब तो आप खुश हैं न।"

"क्या खूब कही आपने आत्मानन्द जी। विषयानन्द और आत्मानन्द दोनों शब्दों में आनन्द है और वह आनन्द एक ही है। आइये, क्यों... न हम उस आनन्द को ईश्वर के चरणों में समर्पित कर दें।"

इसके बाद विषयानन्द और आत्मानन्द एक–दूसरे का हाथ थामे आगे बढ़ गए।

230, आर्य वानप्रस्थ आश्रम, ज्वालापुर (हरिद्वार)

मो. 9639149995

सकाम–निष्काम–महर्षि दयानन्द सरस्वती जी की दृष्टि में

● **भावेश मेरजा**

महर्षि दयानन्द जी ने 'ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका' के वेद–विषय–विचार प्रकरण में लिखा है –

"स यदा परमेश्वरस्य प्राप्तिमेव फलमुद्दिश्य क्रियते तदाऽयं श्रेष्ठफलापन्नो निष्कामसंज्ञां लभते। अस्य खल्वनन्तसुखेन योगात्। यदा चार्थकाम–फलसिद्ध्यवसानो लौकिकसुखाय योज्यते तदा सोऽपरः सकाम एव भवति। अस्य जन्ममरणफलभोगेन युक्तत्वात्।"

(हिन्दी में लिखा है –)

"सो इस भेद को इस प्रकार से जानना कि जब मोक्ष अर्थात् सब दुःखों से छूट के केवल परमेश्वर की ही प्राप्ति के लिए धर्म से युक्त सब कर्मों का यथावत् करना, यही निष्काम मार्ग कहाता है, क्योंकि इसमें संसार के भोगों की कामना नहीं की जाती। इसी कारण से इसका फल अक्षय है। और जिसमें संसार के भोगों की इच्छा से धर्मयुक्त काम किये जाते हैं, उसको सकाम कहते हैं। इस हेतु से इसका फल नाशवान् होता है, क्योंकि सब कर्मों को करके इन्द्रिय भोगों को प्राप्त होके जन्म मरण से नहीं छूट सकता।"

8–17 टाउनशिप, पो. नर्मदानगर,

जि. भरूच, गुजरात – 392015

मो. 9879528247

शिवरात्रि पर मूलशंकर के बोध ने वेदोद्धार कर अविद्या को दूर किया

● मनमोहन कुमार आर्य

ऋषि दयानन्द ने देश–विदेश को एक नियम दिया है **'अविद्या का नाश तथा विद्या की वृद्धि करनी चाहिये'।** इस नियम को संसार के सभी वैज्ञानिक एवं सभी विद्वान् मानते हैं। आर्यसमाज में सभी विद्वान् अनुभव करते हैं कि देश में प्रचलित सभी मत–मतान्तर इस नियम का पालन करते हुए दिखाई नहीं देते। इसी कारण से ऋषि दयानन्द को मत–मतान्तरों की अविद्यायुक्त मान्यताओं, सिद्धान्तों व परम्पराओं सहित सभी अन्धविश्वासों, पाखण्डों एवं आडम्बरों की समीक्षा करने सहित उनका खण्डन करना पड़ा। **ऋषि के इन कार्यों का उद्देश्य विश्व के सभी मनुष्यों व भावी सन्ततियों का कल्याण करना था। ऋषि दयानन्द जी को इस कार्य की प्रेरणा अपने विद्या गुरु स्वामी विरजानन्द सरस्वती से सन् 1863 में गुरु–दक्षिणा के अवसर पर उनसे विदा लेते समय मिली थी। इस कार्य को उन्होंने वेद प्रचार का नाम दिया।** वेद प्रचार का अर्थ सत्य, न्याय तथा विद्यायुक्त मान्यताओं व सिद्धान्तों का प्रचार करना है। **ऋषि दयानन्द के समय में संसार के लोग वेद व उसके महत्व को भूल चुके थे। ऋषि ने अपने गुरु के सान्निध्य में वेदों का महत्त्व जाना था और वेदों को प्राप्त कर उनकी परीक्षा करने के बाद वह इस निष्कर्ष पर पहुंचे थे कि वेद ईश्वरीय ज्ञान है और इसकी सभी बातें सत्य व स्वतः प्रमाण कोटि की है। वेद ही मनुष्य जाति का सर्वविध व सर्वांगीण कल्याण करने वाला दिव्य व अलौकिक ज्ञान भी है। सूर्य के अस्तित्व को सिद्ध करने के लिये किसी प्रमाण की आवश्यकता नहीं होती, वह अपना प्रमाण स्वयं उदय होकर अपने प्रकाश व उष्णता से देता है। जिसको सूर्य का प्रमाण चाहिये उसकी आंख व त्वचा इन्द्रिय ठीक होनी चाहिये जिससे वह वस्तुओं को देख सकता व उनका अनुभव कर सकता हो। मनुष्य अपनी आंखों से सूर्य को देख कर उसका प्रत्यक्ष अनुभव व ज्ञान प्राप्त कर सकता है।**

इसी प्रकार वेद ईश्वर प्रदत्त ज्ञान होने एवं संसार के नियम व व्यवस्थायें वेदों के अनुरूप होने से यह सत्य व यथार्थ ज्ञान सिद्ध होता है। वेदों में ईश्वर, जीव व प्रकृति का यथार्थ ज्ञान प्राप्त होता है। वेद अपनी इस महत्ता के कारण स्वतः प्रमाण है। वेदों से इतर अन्य ऋषियों, विद्वानों तथा आचार्यों द्वारा कही बातें वेद के अनुकूल होने पर ही प्रामाणित व स्वीकार करने योग्य होती हैं। ऋषि दयानन्द ने वेदज्ञान की परीक्षा कर ज्ञान के सत्यासत्य होने की कसौटी **'वेद स्वतः प्रमाण एवं अन्य ग्रन्थ परतः प्रमाण'** को प्रस्तुत कर मनुष्य जाति पर महान् उपकार किया है। यह उनकी एक महत्त्वपूर्ण देन है जिससे समस्त मनुष्य जाति सृष्टि के अन्तिम समय तक ईश्वर, जीवात्मा, सामाजिक परम्पराओं एवं सभी विषयों के ज्ञान सहित ईश्वर की उपासना आदि का सत्य ज्ञान प्राप्त कर लाभान्वित होती रहेंगी। आश्चर्य एवं दुःख की बात है कि अज्ञान व किन्हीं अन्य कारणों से विश्व ने वेदों के महत्त्व व इनकी उपादेयता को उनके यथार्थ स्वरूप में अब तक स्वीकार नहीं किया है। हम विचार करते हैं तो हमें ईश्वर व उसका ज्ञान वेद मनुष्य जाति का सर्वस्व एवं प्राणों के समान महत्त्वपूर्ण प्रतीत होते हैं जिससे मनुष्य जीवन सुगमता से व्यतीत करते हुए परजन्म में भी उन्नति को प्राप्त किया जा सकता है। सम्पूर्ण मनुष्य जाति का कर्त्तव्य है कि वह वेदों की रक्षा करे और वेदाध्ययन कर अपने जीवन को उसके अनुकूल बनाकर धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष को प्राप्त करने में भी सफल हों।

ऋषि दयानन्द का जन्म गुजरात राज्य के मौरवी जिले के टंकारा नामक ग्राम में फाल्गुन कृष्ण पक्ष दशमी, वि. सम्वत् 1881 (12–2–1825) को एक औदीच्य ब्राह्मण परिवार में हुआ था। आयु के चौदहवें वर्ष में उन्होंने शिवरात्रि का व्रत किया था। पिता के साथ रात्रि जागरण करते हुए उन्होंने चूहों को शिवलिंग पर बिना किसी रोकटोक क्रीड़ा करते देखा था। इससे उन्हें बोध हुआ था कि वह मूर्ति सर्वशक्तिमान सच्चे शिव की मूर्ति नहीं है क्योंकि इसमें चूहों को अपने ऊपर से हटाने की शक्ति भी नहीं थी। बालक मूलशंकर (भावी ऋषि दयानन्द) के पिता व अन्य विद्वतजन भी उनकी शंका का समाधान नहीं कर सके थे। इस घटना के बाद से मूलशंकर ने मूर्तिपूजा करना छोड़ दिया था। कालान्तर में उनकी बहिन व चाचा की मृत्यु हुई। इस घटना ने उनके मन में मृत्यु का भय उत्पन्न किया। ऐसा प्रतीत होता है कि वह अपनी मृत्यु का अनुमान कर डरे होंगे। मृत्यु की ओषधि है या नहीं, इसका समाधान उन्हें अपने परिवारजनों व आचार्यों से नहीं मिला। अतः सच्चे ईश्वर व उसकी प्राप्ति के उपायों सहित मृत्यु पर विजय प्राप्ति के साधनों की खोज में वह अपनी आयु के बाईसवें वर्ष में घर छोड़कर चले गये। उन्होंने देश के प्रायः सभी प्रमुख तीर्थ स्थानों में जाकर वहाँ विद्वान् संन्यासियों व महात्माओं का सान्निध्य प्राप्त किया और उनसे अपनी शंकाओं के समाधान जानने का प्रयत्न किया। उन्हें किसी से भी अपने प्रश्नों का सन्तोषजनक उत्तर प्राप्त नहीं हुआ। ऐसा करते हुए उन्होंने योग के आचार्यों से योग विद्या सीखी और उसमें निपुण हो गये। देश की दुर्दशा से वह चिन्तित रहते थे। उनकी यह पीड़ा उनके ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश व आर्याभिविनय आदि में भी प्रकट होती है।

योग में समाधि अवस्था को प्राप्त कर लेने पर भी ऋषि दयानन्द अपनी ज्ञान की पिपासा को सन्तुष्ट नहीं कर पाये। स्वामी पूर्णानन्द सरस्वती जी की संगति से उन्हें मथुरा के प्रज्ञाचक्षु दण्डी स्वामी विरजानन्द सरस्वती का परिचय मिला था जो वेद व आर्ष–ज्ञान के आचार्य थे। दण्डीजी मथुरा में अपनी पाठशाला में विद्यार्थियों को वेदांग व्याकरण अष्टाध्यायी–महाभाष्य पढ़ाते थे। स्वामी दयानन्द सन् 1860 में उनके पास पहुँचे और लगभग 3 वर्ष तक उनके सान्निध्य में रहकर वेद–वेदांगों का अध्ययन किया। तीन वर्षों में यह अध्ययन पूरा हुआ। सन् 1863 में गुरु दक्षिणा के अवसर पर गुरु विरजानन्द ने उनसे संसार से अविद्या वा अज्ञान दूर कर सत्य आर्ष ज्ञान को प्रचारित कर अनार्ष ज्ञान को हटाने की प्रेरणा की। ऋषि दयानन्द ने अपने गुरु की इस प्रेरणा को स्वीकार कर उसे शिरोधार्य किया था और आजीवन इसका पालन किया। इसके बाद से ही उन्होंने धर्म प्रचार का कार्य आरम्भ कर दिया था। उन्होंने अपने प्रयत्नों से वेदों की खोज कर उन्हें प्राप्त किया, उनका गहन अध्ययन एवं परीक्षा की और उसके बाद अपने वेद विषयक सिद्धान्तों का निश्चय कर वह देश भर में सत्य वेदज्ञान के प्रचार के कार्य में संलग्न हो गये। वेद प्रचार ही वह कार्य है जिससे देश देशान्तर में अविद्या को दूर किया जा सकता है। ऋषि दयानन्द को वेद प्रचार का कार्य करते हुए सफलता मिलनी आरम्भ हो गई थी। इसका एक उदाहरण 16 नवम्बर, सन् 1869 को विद्या की नगरी काशी में उनका लगभग 30 सनातनी विद्वानों से मूर्तिपूजा की वेदमूलकता पर शास्त्रार्थ हुआ जिसमें उन्हें सफलता मिली। इससे उन्हें पूरे विश्व में यश प्राप्त हुआ था।

ऋषि दयानन्द का जन्म ऋषियों की भूमि भारत में हुआ था। उनका कर्त्तव्य था कि वह प्रथम भारत में विद्यमान अविद्या, अन्धविश्वास, पाखण्ड एवं सामाजिक विषमताओं को दूर करें। उन्होंने इस कार्य को अपनी पूरी योग्यता व क्षमता से किया। इसका अनुकूल प्रभाव हुआ जो आज भी दृष्टिगोचर हो रहा है। भारत की पराधीनता समाप्त हुई। ऋषि दयानन्द के सिद्धान्तों व धर्मप्रचार एवं शास्त्रार्थ आदि नीतियों को न मानने का परिणाम ही देश का विभाजन था। **ईश्वर, जीवात्मा और संसार का सत्यस्वरूप आज हमारे सामने है। हम ईश्वर की उपासना विधि सहित वायु एवं जल आदि की शुद्धि सहित मनुष्य को रोगों से दूर रखने तथा रोगी को स्वस्थ करने का उपाय अग्निहोत्र यज्ञ को भी जानते व करते हैं।** हम यह भी जान पाये हैं कि हमारे रोगों का कारण हमारी अनियमित दिनचर्या सहित अनियमित भोजन एवं वायु, जल एवं पर्यावरण की अशुद्धि व प्रदूषण होता है। शिक्षा व विद्या का महत्त्व भी देशवासियों ने समझा और आज भारत विद्या के क्षेत्र में विश्व के अग्रणीय देशों में है। ऋषि दयानन्द ने शुद्ध भूमि में परम्परागत देशी खाद व उत्तम नस्ल के बीजों से उत्पन्न खाद्यान्न को मनुष्य के लिए हितकर व स्वास्थ्यवर्धक बताया था। वर्तमान में इस बात की भी पुष्टि हो रही है। ऋषि दयानन्द ने स्वास्थ्य का आधार ब्रह्मचर्य को बताया था यह भी अब सभी स्वीकार करने लगे हैं। ब्रह्मचर्य का सेवन छूट जाने को ही उन्होंने देश व समाज के पतन का प्रमुख कारण भी बताया था। इसे भी विद्वानों ने ज्ञान के स्तर पर सत्य सिद्ध किया है। ऋषि दयानन्द ने मांसाहार, अण्डा, मछली, मदिरा को निन्दित भोजन बताया था। आज हमारे चिकित्सक हृदय व मधुमेह आदि अनेक रोगों में इन पदार्थों का सेवन न करने की सलाह देते हैं। धार्मिक दृष्टि से भी इन पदार्थों का सेवन अत्यन्त निन्दनीय होने सहित आयु ह्रास का कारण है। इससे परजन्म में भी अतीव हानि होती है।

ऋषि दयानन्द ने महाभारत युद्ध के बाद मध्यकाल में सनातन वैदिक धर्म में प्रविष्ट मूर्तिपूजा व जड़पूजा, अवतारवाद, मृतक श्राद्ध, फलित ज्योतिष, सामाजिक असमानता व भेदभाव आदि का भी खण्डन व विरोध किया था। उन्होंने अपने ग्रन्थों में इनके सम्बन्ध में विस्तार से प्रकाश डाला है। आज तक किसी मत–मतान्तर का विद्वान् व आचार्य ऋषि दयानन्द द्वारा खण्डित इन मान्यताओं व विचारों को वेदानुकूल अथवा मनुष्य जाति के लिए हितकर व लाभप्रद सिद्ध नहीं कर सका। ऋषि दयानन्द ने सत्य के प्रचार के लिये सत्यार्थप्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, ऋग्वेद–यजुर्वेद भाष्य, संस्कारविधि, आर्याभिविनय आदि अनेक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थों का प्रणयन किया। उन्होंने वेदों का अध्ययन करने के लिये संस्कृत के अनेक व्याकरण ग्रन्थों की रचना भी की। अपने समय में ऋषि दयानन्द ने अपनी मान्यताओं के समर्थन में विपक्षी विद्वानों से शास्त्रार्थ, वार्तालाप व शंका समाधान आदि भी किये। उनके अनुयायी विद्वानों ने उनके खोजपूर्ण अनेक विस्तृत जीवन चरित्र लिखे। यह सब ऋषि दयानन्द को संसार का महानतम पुरुष सिद्ध करते

शेष पृष्ठ 09 पर

अन्तःकरण (बुद्धि) का सदुपयोग

● महात्मा चैतन्यस्वामी

परमात्मा न्यायकारी है अतः वह हमारे कर्मों के आधार पर ही न्याय करता है। उसकी न्याय-व्यवस्था में जरा सी भी भूल-चूक होने की कोई संभावना नहीं है और न ही परमात्मा किसी की शिफारिश आदि से हमारे पाप-कर्मों को क्षमा करता है। अपने पुण्य कर्मों के आधार पर ही परमात्मा ने हमें यह मानव-शरीर प्रदान किया है। वेद में कहा गया है-

विभक्तारं हवामहे वसोश्चित्रस्य राधसः।
सवितारं नृक्षसम्।।

(यजु. 30-4)

परमात्मा ने हमें हमारे कर्मानुसार यह शरीर तो दिया ही मगर साथ में और क्या कुछ दिया यह भी चिन्तन करने की बात है। परमात्मा ने आत्मा को दो प्रकार के करण (उपकरण) दिए हैं। पांच कर्मेन्द्रियाँ और पांच ज्ञानेन्द्रियाँ ये बाह्यकरण तथा मन, बुद्धि, चित्त और अंहकार (स्व-स्मृति) ये अन्तःकरण दिए हैं। अब हमारा यह दायित्त्व है कि इन बाह्य एवं अन्तःकरण का सदुपयोग करके अपने जीवन को भद्रता से परिपूर्ण करें। वेद हमें आदेश देता है-

भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं
पश्येमाक्षभिर्यजत्राः।
स्थिरैरङ्गैः स्तुष्टुवांसस्तनूभिर्व्यशेमहि
देवहितं यदायुः।।

(सा. 1874)

(**देवाः**) ज्ञान-ज्योति देने वाले विद्वानों! आपकी उपदेश वाणियों से हम (**कर्णेभिः**) कानों से (**भद्रं**) कल्याण व सुखकर शब्दों को ही (**शृणुयाम्**) सुनें। (**यजत्राः**) अपने संग व ज्ञानदान से हमारा त्राण करने वाले विद्वानों! (**अक्षभिः**) हम प्रभु से दी गई इन आंखों से (**भद्रम्**) शुभ को ही (**पश्येम्**) देखें। हम कभी किसी की बुराई को न देखें... (**स्थिरैः अंगैः**) दृढ़ अंगों से तथा (**तनूभिः**) विस्तृत शक्ति वाले शरीरों से (**तुष्टुवांसः**) सदा प्रभु का स्तवन करते हुए, उस आयु को (**व्यशेमहि**) प्राप्त करें, (**यत् आयुः**) जो जीवन (**देवहितम्**) देव के उपासन के योग्य है अर्थात् जो अपने कर्त्तव्यों को करने के द्वारा प्रभु की अर्चना में बीतता है अब हम अन्तःकरण का सदुपयोग करने की चर्चा करेंगे। परम दयालु परमात्मा ने हमें अन्तःकरण (मन, बुद्धि, चित्त और अंहकार) के रूप में जो न्यामत दी है, उसका मूल्य आंकना असंभव सा ही है। अन्तःकरण का दूसरा उपकरण है-**बुद्धि**। बुद्धि को तीर्थ भी कहा गया है। साधारण बुद्धि तो पशु-पक्षियों आदि में भी होती है। मनुष्यों की बुद्धि का क्रमशः विकास होता रहता है। जिस व्यक्ति में अच्छे-बुरे की पहचान करने का सामर्थ्य है मानो उसके पास धी-बुद्धि है। जिसे अन्तर्दृष्टि तथा विवेक प्राप्त हो गया है उसे मानों मेधा-बुद्धि की उपलब्धि हो गई है। संसार में प्रेय और श्रेय दो प्रकार के मार्ग बताए गए हैं, प्रेय है भौतिकवाद का मार्ग और श्रेय है आध्यात्मिकता का मार्ग। जिस व्यक्ति ने इन दोनों पर भली प्रकार चिन्तन करके प्रेय को त्यागकर श्रेय मार्ग अपना लिया है उसे मानो प्रज्ञा की प्राप्ति हो गई है और ऋतंभरा बुद्धि उस व्यक्ति की माननी चाहिए जिसे समाधि प्राप्त हो गई है. ...व्यक्ति निरन्तर अपनी बुद्धि का विकास करना चाहिए....

युक्त्वाय सविता देवान्त्स्वर्यतो धिया दिवम्।
बृहज्ज्योतिः करिष्यतः सविता प्रसुवाति तान्।।

(यजु.11-3)

महर्षि दयानन्द सरस्वतीजी इस मन्त्र को अर्थ लिखते (ऋ.भा.भू.उपा.) हैं-इसी प्रकार वह परमेश्वरदेव भी (**देवान्**) उपासकों को (**स्वर्यतो धिया दिवम्**) अत्यन्त सुख को देके (**सविता**) उनकी बुद्धि के साथ अपने आनन्दस्वरूप प्रकाश को करता है (**युक्त्वाय**) वही अन्तर्यामी परमात्मा अपनी कृपा से उनको युक्त करके उनके आत्माओं में (**बृहज्ज्योतिः**) बड़े प्रकाश को प्रकट करता है। और (**सविता**) जो सब जग का पिता है वही (**प्रसुवा**) उन उपासकों को ज्ञान और आनन्दादि से परिपूर्ण कर देता है परन्तु (**करिष्यतः**) जो मनुष्य सत्य प्रेम भक्ति से परमेश्वर की उपासना करेंगे, उन्हीं उपासकों को परमकृपामय अन्तर्यामी परमेश्वर मोक्षसुख देके सदा के लिए आनन्दयुक्त कर देगा।

बुद्धि को सात्विकता के साथ जोड़ने के लिए व्यक्ति को परमात्मा की उपासना, स्वाध्याय तथा सत्संग भी अपेक्षित है। परमात्मा की उपासना करने से व्यक्ति मूर्खपने से बचता चला जाता है क्योंकि वह सवितादेव ही हमारी बुद्धि को सन्मार्ग की ओर प्रेरित करता है। व्यक्ति ज्यों-ज्यों अच्छे ग्रन्थों का स्वाध्याय करेगा त्यों-त्यों ही उसकी बुद्धि भी निरन्तर विकसित होती चली जाएगी। सत्संग से भी व्यक्ति की बुद्धि विकसित होती चली जाती है और इसके विपरीत कुसंग में बुद्धि का विनाश हो जाता है-

हीयते हि मतिस्तात,हीनैः सह
समागमात्।
समैश्च समतामेति,विशिष्टैश्च
विशिष्टताम्।।

अपने से निम्न विचार कोटि के लोगों के साथ संगति करने से अपनी बुद्धि भी निम्न विचार कोटि की हो जाती है। स्वसमान विचार वालों की संगति से बुद्धि सम रहती है और उच्च विचार वालों की संगति से बुद्धि उच्चता को प्राप्त होती है। इसलिए अपनी बुद्धि को विकसित करने के लिए व्यक्ति को हृदय से प्रयास करने चाहिए। श्री कृष्ण महाराज ने व्यक्ति की त्रिगुणात्मक प्रवृत्ति के आधार पर बुद्धियों के जो भेद किए हैं (गी.18-29 से 32) वे विशेष रूप से मनन करने योग्य हैं। इसका मनन करने के बाद व्यक्ति के सामने यह तथ्य प्रकट होता है-

बुद्धिर्भेदं धृतेश्चैव गुणतस्त्रिविधं श्रृणु।
प्रोच्यमानमशेषेण पृथक्त्वेन धनंज्य।।
प्रवृत्तिं च निवृत्तिं च कार्याकार्ये भयाभये।
बन्धं मोक्षं च या वेति बुद्धिः सा पार्थ
सात्त्विकी।।
यया धर्ममधं च कार्यं चाकार्यमेव च।
अयथावत्प्रजानाति बुद्धिः सा पार्थ
राजसी।।
अधर्म धर्ममिति या मन्यते तमसाऽऽवृता।
सर्वार्थान् विपरीताश्च बुद्धिः सा पार्थ
तामसी।।

हे धनंजय! अब तू सत्त्व-रज-तम इन तीन गुणों के अनुसार बुद्धि और धृति के तीन भेदों को सुन जिन्हें मैं पूरी तरह से अलग-अलग करके बतलाता हूँ। जो बुद्धि प्रवृत्ति-मार्ग और निवृत्ति-मार्ग के भेद को समझती है, जो करने योग्य कार्य और न करने योग्य कार्य में भेद कर सकती है, जो इस बात को समझती है कि किससे डरना चाहिए और किससे नहीं डरना चाहिए, क्या वस्तु आत्मा को बन्धन में डालती है,क्या बन्धन से छुड़ा देती है, वह बुद्धि सात्त्विकी होती है। जिस बुद्धि के द्वारा मनुष्य धर्म और अधर्म को, कार्य और अकार्य को ठीक-ठीक नहीं समझ पाता, वह बुद्धि राजसी होती है और जिस बुद्धि के द्वारा अन्धकार के आवरण से घिरा हुआ मनुष्य अधर्म को धर्म समझने लगता है, और सब बातों को उल्टा देखने लगता है, वह बुद्धि तामसी होती है। हमारी बुद्धि क्यों सात्विकता से जुड़ी हुई होनी चाहिए? क्योंकि सात्त्विक-बुद्धि ही प्रवृत्ति-मार्ग और निवृत्ति-मार्ग का ज्ञान कराके आत्मा को बन्धनों से छुड़ा देती है। गायत्री मन्त्र-**भूर्भुवः स्वः। तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्याधीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात्।।** (यजु. 36-3) के द्वारा हम ऐसी ही बुद्धि की कामना करते हैं मगर गायत्री मन्त्र का जाप भर कर लेने से कुछ विशेष लाभ होने वाला नहीं है जब तक कि हम परमात्मा के वरणीय, मल-रहित एवं दिव्यस्वरूप का सम्यक् ध्यान नहीं करते हैं... हम ज्यों ही धीमहि करेंगे उसी क्षण हमारी बुद्धि सन्मार्ग-गामी हो जाएगी। गायत्री मन्त्र यजुर्वेद के 36वें अध्याय का तीसरा मन्त्र है। यदि हम अपने जीवन में इसी अध्याय के पहले दो मन्त्रों का कार्यन्वयन कर लें तो हमारी बुद्धि निश्चित् ही सात्विक बनेगी तथा हमें जन्म-मरण के बन्धन से मुक्ति दिलाएगी-

ऋचं वाचं प्रपद्ये मनो यजुः प्रपद्ये साम
प्राणं प्रपद्ये चक्षुः श्रोत्रं प्रपद्यते।
वागोजः सहौजो मयि प्राणापानौ।।

(36-1)

यन्मे छिद्रं चक्षुसो हृदयस्य मनसो
वातितृण्णं बृहस्पतिर्मे तद्दधातु।
शं नो भवतु भुवनस्य यस्पतिः।।

(36-2)

प्रथम मन्त्र का भावार्थ है कि हम जीवन में चार व्रत धारण करें। वाणी को ज्ञान-प्राप्ति में लगाए रखकर इससे मधुर शब्द ही बोलेंगे। मन को सदा उत्तम कर्मों में लगाए रखकर कभी पराए दोषों को देखने में न लगाएंगे। जीवन में प्रभु को कभी विस्मृत न करेंगे और श्रोत्र से सदा ज्ञान का श्रवण करेंगे। दूसरे मन्त्र का भावार्थ है कि प्रभु का सान्निध्य व आनन्द प्राप्त करने के लिए हम जो आंखादि ज्ञानेन्द्रियों के दोष हैं उन्हें दूर करें... हृदय में जो द्वेष-भावना आदि है उसे दूर करें मन को संकल्पशील व एकाग्र करें तो वह परमात्मा हमारे ऊपर निश्चित् ही आनन्द की वर्षा करेंगे।

एक बार राजा जनक ने भारी दक्षिणा वाले यज्ञ का अनुष्ठान् किया जिसमें अनेक ब्रह्मज्ञानी ऋषि आमन्त्रित थे, एक सहस्त्र गौवें जिनके सींग सोने से मढ़े हुए थे, समुपस्थित थीं। उस सभा में जनक ने कहा कि हे ब्राह्मणों! आप में से जो ब्रह्मज्ञानी हो वह गौवों को ले जाए... किसी को साहस न हुआ मगर याज्ञवल्क्य ने अपने शिष्य से कहा, सामश्रवा गौवों को हाँककर ले चलो.... सभा में बैठे अनेक विद्वानों ने उनसे अनेक प्रश्न किए जिनके सार्थक उत्तर याज्ञवल्क्यजी ने दिए। जनक के होता अश्वल ने याज्ञवल्क्यजी से पूछा-तुम्हें नमन है मगर यह बताओ कि जो कुछ यह सब है, मृत्यु का ग्रास हो जाता है, आत्मज्ञानरूप यज्ञ का अनुष्ठान् करने वाला यजमान किस उपाय से छुटकारा पा सकता है? याज्ञवल्क्य ने उत्तर दिया-आत्म-ज्ञानरूपी यज्ञ के चार ऋत्विक् हैं,जीवात्मा यजमान है। ऋत्विक् हैं-वाक्, चक्षुः, प्राण और मन। इन चार ऋत्विजों द्वारा जब यज्ञ सम्पन्न हो जाता है तो यजमान (आत्मा) जन्म-मरण के बन्धन से छुटकारा पा जाता है। याज्ञवल्क्य का यह कथन बहुत रहस्यपूर्ण है, इसमें कुछ भाव अन्तर्निहित हैं। आत्मज्ञान की विधि को यज्ञ का रूप देकर चार ऋत्विजों की कल्पना की। आत्मज्ञान के लिए जिन विधियों का अनुष्ठान् किया जाता है, उसके आधार वाक् आदि हैं जो इस यज्ञ में ऋत्विक्-रूप से कल्पित किए गए हैं। सर्वप्रथम कर्मेन्द्रियों का संयम आत्मज्ञान की दिशा में कदम बढ़ाने के लिए आवश्यक है। दूसरा ऋत्विक् चक्षु है, यह समस्त ज्ञानेन्द्रियों का उपलक्षण है। यह समस्त ज्ञानेन्द्रियों के संयत किए जाने की ओर संकेत करता है। तीसरा ऋत्विक् 'प्राण' है। समाधि अवस्था प्राप्त करने के लिए

शेष पृष्ठ 09 पर ☞

पर्यावरण की समस्या तथा इसका वेदोक्त समाधान

● वेदाचार्य डॉ. रघुवीर वेदालंकार

पर्यावरण शब्द 'परि' तथा 'आ' उपसर्ग पूर्वक 'वृत्र् आवरणे' धातु से निष्पन्न होता है। जिसका अर्थ है–चारों ओर का आवरण। आज विश्व की चिन्ता का विषय यह पर्यावरण ही है, जो निरन्तर दूषित होता जा रहा है। वर्तमान में पर्यावरण प्रदूषण के निम्न प्रकार हैं–

वायु प्रदूषण–प्रकृति में वायु प्रदूषण निवारण की क्षमता थी किन्तु आज मानव ने वायु मण्डल को प्रदूषित करने वाली प्रक्रियाओं में इतनी वृद्धि कर ली है कि प्रकृति उसके संशोधन में असमर्थ होने लगी है। शक्ति तथा ऊष्मा के साधन, विशालतम कारखाने, यातायात के साधन इस वायु प्रदूषण के प्रमुख कारण हैं। समुद्री जहाज धुएँ तथा विषैले द्रव्यों से समुद्री वातावरण को प्रदूषित कर रहे हैं। उक्त साधनों से निकलने वाले कार्बन डाईऑक्साइड, कार्बन मोनो ऑक्साइड तथा सल्फर डाई ऑक्साइड से लगभग तीन करोड़ विषैले पदार्थ प्रतिवर्ष वायुमण्डल में घुल जाते हैं। वैज्ञानिकों के अनुसार एक मोटर वाहन से वर्ष भर में 200 कि.ग्रा. कार्बन मो.आ., 40 कि. ग्रा. नाइट्रोजन, 200 कि.ग्रा. हाइड्रोजन वायुमण्डल में मिश्रित हो जाती है। पिछले दशाब्द में हुए परमाणु परीक्षणों से भी वायुमण्डल प्रदूषित हुआ है। इन दोनों से वातावरण में कोहरा, धूल, धूएँ, सल्फर डाई.आ., कार्बन मो.आ., कार्बन डाई.आ., नाइट्रोजन के आ., सीसे के कण आदि की वृद्धि वायुप्रदूषण में वृद्धि कर रही है।

जल प्रदूषण– जल को जीवन कहा गया है किन्तु यह जल आज कितना प्रदूषित है, यह सब जानते हैं। भारत के नगरों में प्रायः पीने का पानी नदियों से लिया जाता है। किन्तु इन्हीं नदियों को कूड़ा–कचरा, अधजले शव, मुर्दा पशु आदि डालकर प्रदूषित किया जा रहा है। देश का 50% मत्स्य उत्पादन नदियों में ही होता है। कारखानों का मल तथा निसर्जित पदार्थ भी नदियों में ही डाले जाते हैं। इससे जल में क्लोरीन की मात्रा भी बढ़ जाती है। चीनी, रासायनिक खाद्य, चमड़े, शराब आदि के कारखाने तथा शहरी जनता का प्रतिदिन नदियों में डाला जाने वाला मल जल प्रदूषण के मुख्य कारण हैं।

भूमि प्रदूषण–पृथिवी पर फेंके गए मल–मूल तथा नाना प्रकार की गन्दगी से वायु प्रदूषण के साथ–साथ भूमि प्रदूषण भी उत्पन्न हो रहा है। खेतों में डाली जाने वाली कीटनाशक दवाएँ तथा रासायनिक खाद भूमि को निरन्तर प्रदूषित कर रहे हैं। प्रदूषित जल का बहाव भी इसमें प्रमुख कारण है।

ध्वनि प्रदूषण– वायुयान, यातायात के साधन रेल तथा अन्य वाहनों से उपजा शोर, टी.वी., ध्वनिविस्तारक यन्त्र, बड़े–बड़े कारखानों तथा मशीनों का भयंकर शोर। ये सभी ध्वनि प्रदूषण के घटक हैं। दिल्ली जैसे महानगर केन्द्र में शोर का माप 95 बिन्दु है जबकि अन्तर्राष्ट्रीय माप 45 बिन्दु है। इस प्रदूषण का सबसे भयंकर प्रभाव हृदय तथा मस्तिष्क पर होता है। रक्तचाप, अशक्ति, कर्णरोग आदि रोग भी इनकी ही देन हैं।

जनसंख्या में वृद्धि–जनसंख्या में वृद्धि भी पर्यावरण का प्रमुख कारण है। बढ़ती जनसंख्या के कारण वनों का सफाया किया जा रहा है। सिद्धान्त है कि जनसंख्या बढ़ेगी तो वन कटेंगे। जनसंख्या कम रहेगी तो वन बढ़ेंगे जो कि पर्यावरण को शुद्ध रखेंगे।

पर्यावरण की रक्षा का वैदिक मार्ग–आज जिस पर्यावरण प्रदूषण की समस्या से विश्व चिन्तित है, वेदों में उसका उल्लेख एवं समाधान दोनों ही प्राप्त होते हैं। पर्यावरण चाहे बाह्य हो या आन्तरिक, इसके घटकतत्त्व पञ्च महाभूत ही हैं। अग्नि, पृथिवी, जल, आकाश तथा वायु ये पाँचों तत्त्व ही पर्यावरण के आधार हैं। ये दूषित होंगे तो पर्यावरण भी दूषित हो जाएगा। ये शुद्ध होंगे तो पर्यावरण भी शुद्ध होगा, न केवल बाह्य, अपितु आन्तरिक भी, क्योंकि मन भी भौतिक है तथा इन्हीं तत्त्वों से मिलकर बना है। ये पाँच तत्त्व ही व्यष्टि= शरीर तथा समष्टि= समस्त विश्व को नियन्त्रित कर रहे हैं। इसीलिए वेद में इनके शान्तियुक्त होने की बात कही गयी है। यजुर्वेद में कहा गया है कि हमारे लिए शान्तिदायक वायु बहे, सूर्य भी शान्तिप्रद रूप से तपे, बादल शान्तिदायक वर्षा करे। (**शन्नो वातः पवतां शन्नस्तपतु सूर्यः। शं नः कनिक्रदद्देवः पजन्यो अभिवर्षतु।। यजु. 36. 10**) ऐसा नहीं कि अतिवृष्टि तथा अनावृष्टि ही हमारा विनाश करें। ऋग्वेद कहता है कि पर्वत भी हमारे लिए शान्तियुक्त हों। नदियाँ शान्तिदायक जल लाएँ। ऐसा नहीं कि आज की तरह प्रदूषण युक्त हो जाएं। वेद केवल इनके शान्तियुक्त होने की बात नहीं करता, अपितु इसके उपाय भी बताता है। यजुर्वेद में कहा गया है–

हविष्मतीरिमा आपो हविष्माँ आ विवासति।
हविष्मान्देवो अध्वरो हविष्माँ अस्तु सूर्यः।।

यजु. 6.23

यहाँ पर जलों तथा सूर्य के लिए हवि देने को कहा गया है। यज्ञिय हवि के द्वारा ही जल तथा वायु को शुद्ध किया जा सकता है। वही यज्ञिय हवि सूर्य को प्राप्त होती है जिससे शक्तिदायक वर्षा होती है। इसके लिए ही वेद में '**शन्नः पर्जन्योऽभिवर्षतु**' कहा गया है। मनुस्मृति में इसी रहस्य को इस प्रकार स्पष्ट किया गया है–

अग्नौ प्रास्ताहुतिः सम्यादित्यमुपतिष्ठते।
आदित्याज्जायते वृष्टिर्वृष्टेरंन्न ततः प्रजाः।।

मनु. 3.76

अर्थात् अग्नि में डाली गयी आहुति सूर्य को प्राप्त होती है जिससे वृष्टि होती है। जैसी भी आहुति सूर्य को प्राप्त होगी, उससे वैसे ही बादल बनेंगे तथा वैसी ही वृष्टि होगी। यज्ञ की हवि से भावित शुद्ध वायु से बादल भी शुद्ध बनेंगे तथा उनसे वर्षा भी शुद्ध होगी। उस वर्षा से जीवनदायिनी कृषि वनस्पति आदि भी शुद्ध होगी। (**शन्न पर्वता ध्रुवयो भवन्तु शं नः सिन्धवः शमु शन्त्वापः** (ऋ. 7.36.8)

इसके विपरीत उद्योगों तथा वाहनों से उत्पन्न विषैले धुएँ के सम्पर्क से वायु भी विषैली बन जाएगी तथा बादल भी दूषित जल बरसायेंगे। इस प्रक्रिया के अनुसार विषैले धुएँ के कारण तेजाबी वर्षा को स्वयं अपनी आँखों से देखकर आज वैज्ञानिक भी इस पर विश्वास करने लगे हैं। अमरीका से प्रकाशित पत्रिका 'नेशनल हार्डीकल्चर सोसायटी' के सम्पादक डॉ.एन. मेक्केलिप्स के अनुसार इस तेजाबी से बचने का एकमात्र उपाय अग्निहोत्र है।

यज्ञिय आहुति जहाँ एक ओर शान्तिदायक बादलों को उत्पन्न करती है, वहाँ वातावरण में भी माधुर्य का संचार कर देती है। ऋग्वेद में सिन्धु, ओषधि, वनस्पति, पृथिवी, द्यौ आदि सभी के मधुयुक्त होने की बात कही गयी है। माधुर्य का अर्थ केवल मीठा ही नहीं, अपितु समता युक्त (Balanced) है। वही वायु मधु कहलायेगी जो न बहुत रूक्ष हो, न दाहक हो, न अधिक शीतल हो, तथा न ही झंझावात के रूप में विनाशिनी हो। इसी प्रकार नदियों के जल भी रोगोत्पादक विषैले न होकर माधुर्य पूर्ण हों।

पर्यावरण की यह समरसता यज्ञ द्वारा ही सम्भव है, अन्य साधन से नहीं। भारत में 'पर्यावरण संरक्षण संघ' नासिक के अध्यक्ष प्रो.एस. मूले ने 'मेडिसिना एल्टरनेरिया' द्वारा आयोजित एक विश्व सम्मेलन में अग्निहोत्र के प्रदर्शन के द्वारा बतलाया कि प्रदूषण के कारण सूर्य तथा पृथिवी के मध्य का वातावरण बिगड़ गया है जिसे अग्निहोत्र द्वारा ही अनुकूल बनाया जा सकता है।

ऋग्वेद में द्यावा–पृथिवी को घिरा हुआ, घृत को धारण करने वाले तथा घृत से बढ़ने वाले कहा गया है। (**घृतेन द्यावापृथिवी अभीवृते घृतश्रिया घृतपृचा घृतवृधा। ऋ. 6.70.4**) यह प्रक्रिया यज्ञ द्वारा ही सम्भव है कि यज्ञाग्नि में प्रदत्त घृत सूक्ष्म होकर द्यावा–पृथिवी में सर्वत्र व्याप्त हो जाता है। उन्हें सिञ्चित करता है, जिससे उनकी वृद्धि होती है। इसी सूक्त के पंचम मन्त्र में द्यावा–पृथिवी को मधु से परिपूर्ण तथा मधुव्रत वाले कह कर बतलाया गया है कि द्यावा–पृथिवी तभी मधु तथा घृत से पूर्ण होंगे जबकि यज्ञ को धारण करेंगे। (**मधु नो द्यावापृथिवी मिमिक्षतां मधुश्चुता मधुदुघे मधुव्रते। दधाने यज्ञं द्रविणं च देवता महि श्रवो वाजमस्ते सुवीर्यम्।।** ऋ. 6.70.5)

शतपथ ब्राह्मण में कहा गया है कि यज्ञ ही देवों का खाद्य है अर्थात् अग्नि आदि भौतिक जड़ देवों की तृप्ति यज्ञ के द्वारा ही होती है। (**प्रजापतिर्देवानब्रवीत् यतो वोऽन्नम्। यज्ञः उ. देवानामन्नमभूत्।**) यज्ञ न होने से जल–वायु आदि भूतों पर देवशक्तियों का नियन्त्रण न रहने से ही अतिवृष्टि, अनावृष्टि–जलप्लावन आदि विपत्तियाँ प्राप्त होती हैं। (**यज्ञे नष्टे देवनाशः ततः सर्व प्रणश्यति (वा. पु. 60.5)** ये सभी जड़देव अग्नि के माध्यम से ही अपनी हवि ग्रहण करते हैं। इसी अभिप्राय से ब्राह्मण ग्रन्थों में अग्नि को देवों का मुख कहा गया है। (**अग्निर्वै देवानां मुखम्।**) प्रकृति की सभी प्राणरक्षक–प्राणदायिनी जीवन शक्तियाँ ही देव कहलाती हैं। यज्ञ के नष्ट होने पर इन सभी देवों का नाश हो जाता है या इनमें क्षति उत्पन्न होती है। जिससे सब कुछ नष्ट हो जाता है। न केवल जड़ देवों, अपितु चेतन प्राणियों का पालन भी यज्ञ ही करता है। (**यज्ञो हि सर्वाणि भूतानि भुनक्ति (शत. 9,4,1,11)** शतपथ ब्राह्मण में कहा गया है कि यज्ञ में सभी प्राणी समाविष्ट हैं अर्थात् यज्ञ उनके जीवन का महत्त्वपूर्ण रक्षक तत्त्व हैं। (**यज्ञे हि सर्वाणि भूतानि विष्टानि (शत. 8,7,2,21)** यज्ञ एक प्रकार का विज्ञान है तथा इसकी सभी क्रियाएँ वैज्ञानिक हैं। इसी आशय से तैत्तिरीय उपनिषद् में '**विज्ञानं यज्ञं तनुते**' कहा गया है। इलाहाबाद विश्वविद्यालय के भू.पू. वैज्ञानिक डॉ. सत्यप्रकाश ने यज्ञ की सामग्री का विश्लेषण करते हुए पाया कि उसमें ऐसे तत्त्व हैं जिनसे फारमेल्डीहाइड (Formaldihyde) गैस उत्पन्न होती है। यह गैस में बिना परिवर्तित हुए वायुमण्डल में फैल जाती है। कुछ अंश में कार्बन डाईऑक्साइड भी इसी गैस परिवर्तित हो जाती है। आप लिखते हैं– "To some extent even carbondioxide is also reduced to formaldihyde" आप अपनी पुस्तक Agnihotra के पृ. 153 पर लिखते हैं कि 1886 में ल्यू तथा फिशर (Loew and Fisher) ने मालूम किया था कि फारमेल्डीहाइड गैस एक शक्तिशाली कीटाणुनाशक गैस है। केम्बीयर तथा ब्रोचेट (Cambier and Brochet) ने अपने परीक्षणों से यह सिद्ध किया है कि इस गैस से घर के गर्द के कीटाणु भी नष्ट होते हैं। यह बात विशेष है कि इस गैस का प्रभाव तभी होता है जबकि पानी के वाष्पों की संगति इसे मिले। यज्ञ में इसी अभिप्राय से यज्ञ कुण्ड के चारों ओर मेखलाओं में पानी भरा जाता है।

क्रमशः

बी–266 सरस्वती विहार,
नई दिल्ली–110034
मो. 9627020557

कर्मफल के कुछ प्रमुख पहलुओं पर विचार

● खुशहाल चन्द्र आर्य

कर्मफल का विषय इतना गम्भीर है कि इसकी पूरी जानकारी पाना असम्भव है, फिर भी कुछ मुख्य–मुख्य जानकारियाँ हर व्यक्ति को होनी चाहिए जिससे वह जान सके कि ईश्वर की न्याय व्यवस्था में कोई पक्षपात, रियायत व भेद–भाव नहीं है। वह बिल्कुल निष्पक्ष है। जो व्यक्ति जितना अच्छा या बुरा कर्म करेगा, उसको अच्छे कर्मों का फल सुख के रूप में और बुरे कर्मों का फल दु:ख के रूप में, हर हालत में निश्चित ही मिलेगा और कम–अधिक भी नहीं मिलेगा। इसलिए हर समझदार व आस्तिक व्यक्ति को बुरे कर्म करना छोड़ देने चाहिए और अच्छे कर्म करने चाहिए जिससे उसकी उन्नति व समृद्धि दिनों दिन बढ़ती रहे। यदि कोई व्यक्ति पूरे जन्म में ही निष्काम कर्म किये हो यानि स्वार्थ की भावना से न करके परोपकार की भावना से किये हों तो उसको मरने के बाद निश्चित ही मोक्ष मिलेगा जो जीव का अन्तिम लक्ष्य है। इसी की प्राप्ति के लिए जीव अपने कर्मानुसार अनेक योनियों से होते हुए अन्त में मनुष्य योनि में आता है। मनुष्य योनि में किसी ने पूरे जीवन शुभ व परोपकार के काम तथा बुरे काम भी किये हैं। उसकी मरने के बाद दो गतियाँ होती है। एक गति यह है कि यदि उसने 50 प्रतिशत से अच्छे काम अधिक किये हैं तो उसको दूसरा जन्म मनुष्य योनि में ही मिलेगा और अच्छे कर्म जितने अधिक होंगे उतनी ही अच्छी मनुष्य योनि मिलेगी, और यदि उस जीव के अच्छे कर्म 50 प्रतिशत से कम होंगे यानि बुरे कर्म अधिक होंगे तो मनुष्य से नीचे की योनियाँ पशु–पक्षी, कीट–पतंग, कीड़े–मकौड़े योनियाँ मिलेगी। यदि 50 प्रतिशत से कुछ कम अच्छे कर्म है तो उसको गाय या घोड़ा की योनि मिलेगी। और भी अधिक कम अच्छे कर्म हैं तो उसको कुत्ता, बिल्ली, गधा आदि की योनि मिलेगी। इस प्रकार अच्छे कर्म कम होते जायेंगे और बुरे कर्म अधिक होते जायेंगे, उसी हिसाब से निम्न योनियाँ मिलती जायेगी। इस मनुष्य योनि को छोड़ते वक्त जीव की तीन गतियाँ होती हैं–(1) मोक्ष (2) मनुष्य योनि से मनुष्य योनि ही हल्की या भारी (3) मनुष्य योनि में पशु–पक्षी, कीट–पतंग या वनस्पति आदि। अब कर्म फल पर और अधिक प्रकाश इसी भाँति डालते हैं।

1. कर्म दो किस्म के होते हैं–

पहला स्वाभाविक कर्म दूसरा नैमित्तिक कर्म। स्वाभाविक कर्म या साधारण वह होता है जो मनुष्य को कम और पशु–पक्षी व कीट–पतंग को अधिक होता है। इसमें खाना–पीना, सोना–जागना, बैठना–उठना सन्तान उत्पन्न करना आदि होते हैं। इसका ईश्वर की तरफ से कोई फल नहीं मिलता। नैमित्तिक कर्म वे कर्म होते हैं जिनका ईश्वर फल देता है। ये कर्म मनुष्यों पर ही लागू होते हैं, पशु–पक्षियों पर नहीं। ये कर्म दो किस्म के होते हैं अच्छे और बुरे। अच्छे कर्म में होते हैं दान देना, किसी का उपकार करना, कुएँ, धर्मशाला, होस्पिटल, गोशाला आदि खोलना। दीन–दुखियों को अन्न व कपड़े बांटना, दया, करुणा करना, काम, क्रोध, लोभ, मोह, ईर्ष्या, द्वेष आदि न करना, सत्य बोलना, चोरी न करना, सबसे सद् व्यवहार रखना किसी को धोखा न देना, ईमानदारी से व्यापार करना। ये सब काम अच्छे काम है। इनका ईश्वर सुख के रूप में फल देता है। चोरी करना, झूठ बोलना, किसी को धोखा देना, बेईमानी करना, किसी को दु:खी करना आदि। ये कर्म बुरे कर्म हैं, इसका ईश्वर दु:ख के रूप में मनुष्य को फल देता है। कुछ कर्म मिश्रित कर्म भी हैं। इसमें अच्छे व बुरे दोनों किस्म के कर्म आते हैं। जैसे दुकानदारी करना, खेती करना, पशुपालन करना, डॉक्टरी करना, वकीली करना, बच्चों को पढ़ाना, नौकरी करना आदि। इसमें मनुष्य को अच्छे बुरे दोनों काम करने पड़ते हैं। ईश्वर अच्छे काम का फल सुख के रूप में और बुरे कर्म का फल दु:ख के रूप में देता है। यह हिसाब ईश्वर ही अपने पास रखता है। बहुत लोग कहते हैं कि किसी ने बुरे कर्म एक सौ किये और अच्छे कर्म साठ किये तो ईश्वर सौ में से साठ घटाकर केवल चालीस बुरे कर्मों का फल ईश्वर देगा, सो ऐसी बात नहीं है। ईश्वर सौ बुरे कर्मों का फल अलग देगा और अच्छे साठ कर्मों का फल अलग देगा। ईश्वर के घर में घटाव जोड़ नहीं है। एक बात ये याद रखने के योग्य है कि जीव का पुनर्जन्म उसे जाति, आयु व भोग के आधार पर, यानी वह जीव अगली योनि में किस जाति में जन्म लेगा यानी मनुष्य बनेगा या पशु–पक्षी या अन्य योनि में जायेगा। आयु का तात्पर्य यह होता है कि वह उस जन्म में कितने वर्षों तक जीवित रहेगा। तीसरा वह जीव किसके घर में पैदा होगा और क्या भोग करेगा यानी राजा या साहुकार के घर में पैदा होगा तो अच्छा खायेगा–पीएगा और गरीब में पैदा होगा तो हल्का भोजन करेगा और कभी भूखा भी रहना पड़ सकता है। उम्र और भोग जीव घटा या बढ़ा सकता है परन्तु जाति बदली नहीं जा सकती। उम्र यदि किसी की साठ साल निर्धारित की है तो वह संयम और ब्रह्मचर्य से आयु बढ़ा सकता है। भोग भी अधिक व कम कर सकता है पर जाति नहीं बदल सकता। दूसरी बात यह है कि आयु ईश्वर वर्षों में नहीं करता है बल्कि साँसों पर निर्धारित करता है यानी ईश्वर जीव में जितने श्वास डालता है उतने ही श्वास लेकर जीव मृत्यु को प्राप्त हो जाता है इसीलिए संयमी व ब्रह्मचारी श्वास कम लेते हैं तो उनकी आयु बड़ी होती है भोगी व्यक्ति श्वास अधिक लेता है उसकी आयु कम होती है। हम जो कर्म करते हैं उनकी तीन स्थिति होती है। जो काम करे रहे हैं उनको क्रियमाण कर्म कहते हैं, तो कर्म कर चुके हैं उनको कृति कर्म कहते है। जो काम करेंगे उनको करिष्माण कर्म कहते हैं। जिन कर्मों का फल हाथों हाथ मिलता है वह कर्म समाप्त हो जाते हैं जैसे किसी ने चोरी की और उसको छः महीने की कैद हो गई तो यह कर्म यहीं समाप्त हो गया, और जिन कर्मों का फल इस आयु में नहीं मिलता है, उसको संचित कर्म कहते हैं। इनका फल ईश्वर अपनी न्याय व्यवस्था के अनुसार कभी भी दे सकता है। इन्हीं के आधार पर पुनर्जन्म होता है।

2. योनि दो किस्म की होती है –

पहली भोग योनि और दूसरी कर्म योनि। भोग योनि में पुश–पक्षी, कीट–पतंग आते हैं। इसमें खाना–पीना, सोना–जागना, बच्चे पैदा करना आदि जरूरी काम हैं। इनका ईश्वर फल नहीं देता। दूसरी कर्म योनि होती है। ये केवल मनुष्य में ही होती है। इससे ईश्वर किये हुए कर्मों का फल देता है। इसी से सारी सृष्टि चलती है। पूरा विवरण ऊपर लिख चुके हैं। गीता में कृष्ण भगवान ने भी तीन किस्म के कर्म बताये हैं। पहला साधारण कर्म जैसे खाना पीना, सोना–जागना, उठना–बैठना आदि इसका ईश्वर कोई फल नहीं देता है। दो किस्म के कर्म और बताये हैं। वे हैं अकर्म और विकर्म। जो कर्म नि:स्वार्थ भाव से परोपकार की दृष्टि से किये जाएँ उनको अकर्म कर्म कहते हैं। जो कर्म अपने स्वार्थ की दृष्टि से किये जाएँ उनको विकर्म कर्म कहते हैं। दोनों का फल अच्छे कर्मों का सुख के रूप में और बुरे कर्मों का फल दु:ख के रूप में जरूर–जरूर मिलता है।

वैसे तो कर्म फल की व्याख्या बहुत बड़ी है परन्तु मेरी बुद्धि के अनुसार मुझे जो ज्ञान है उसके अनुसार लिखने का प्रयास किया है। कृपया सुधि पाठकगण इतने को ही पर्याप्त समझ कर लाभ उठाएँ ताकि मेरा परिश्रम सफल हो सके। इतना ही निवेदन करके मैं लेख को विराम देता हूँ।

180, दो तल्ला महात्मा गांधी रोड
कोलकता–700007

☞ पृष्ठ 07 का शेष

अन्तःकरण (बुद्धि) ...

जिन यौगिक क्रियाओं का अनुष्ठान् किया जाता है, उनमें मुख्य प्राणायाम है। 'प्राण' ऋत्विक् इस सम्बन्ध के समस्त अनुष्ठानों का उद्बोधक है। चौथा ऋत्विक् मन है, वह अन्तःकरण (मन–बुद्धि–चित्त–अंहकार) का प्रतीक है, ऋत्विकों में यह ब्रह्मा का स्थान लिए हुए है। आत्मज्ञान के लिए अन्तःकरण की शुद्धि और मन की एकाग्रता अन्तिम सीढ़ी है....'

महर्षि दयानन्द धाम,
महादेव, सुन्दरनगर–175018, हि.प्र.
94180–53092
chaitnyamuni @ gmail.com

☞ पृष्ठ 06 का शेष

शिवरात्रि पर ...

हैं जो दृण ईश्वर विश्वासी हैं, अद्भुद ज्ञानी हैं, तपस्वी व पुरुषार्थी हैं, तर्क शक्ति से सम्पन्न हैं, किसी भी विवादित विषय पर चर्चा करने पर अपराजेय हैं, एक साधारण नाई की सूखी रोटी स्वीकार कर उसे भी प्रेम से खाते हैं तथा विश्व बन्धुत्व का प्रचार करने सहित सभी मनुष्यों को परमात्मा की सन्तान बताते हैं। ऋषि दयानन्द ने अपने उपदेशों व ग्रन्थों के द्वारा जिस सत्य सनातन तर्क–सिद्ध व सर्वहितकारी वैदिक धर्म का प्रचार किया वही धर्म एवं संस्कृति विश्व के प्रत्येक मनुष्य का वस्तुतः सत्य व यथार्थ धर्म व संस्कृति है। संसार को इसको अपनाना ही होगा। अन्य कोई सत्य धर्म व जीवन शैली वैदिक जीवन के समान हो ही नहीं सकती। ऋषि दयानन्द ने शुद्ध हृदय एवं भावनाओं से संसार से अविद्या दूर करने के लिये सत्य सनातन सिद्धान्तों पर आधारित जिस वैदिक मत का प्रचार किया उसमें वह सफल हुए हैं। वैचारिक धरातल पर ऋषि दयानन्द के अधिकांश विचारों को पूरे विश्व में स्वीकृति मिल चुकी है। कोई इनको चुनौती नहीं देता। मूर्तिपूजा तथा फलित ज्योतिष आदि ऋषि के मन्तव्यों को भी आने वाले समय में स्वीकृति अवश्यमेव मिलेगी। इसी के साथ इस लेख को विराम देते हैं। ओ३म् शम्।

196 चुक्खूवाला–2
देहरादून–248001
फोन: 9412985121

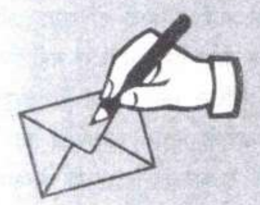

पत्र/कविता

कानों से जो देखता सो अन्धा कहलाए

वापिस जो लौटा सके, देना उसे उधार।
जो तुमसे भी कर सके, करना उससे प्यार।।

सुन लेने से सुलझ गए, सारे बड़े सवाल।
सुना दिया तो उलझ गए, सुलझे नहीं सवाल।।

पीड़ा तुझको जो मिले, सहना तू बिन हार।
अग्न तुझको तपा रही, देती सदा निखार।।

पीड़ा मुझको जो मिली, मेरे ही थे काम।
अपने कर्मो का सदा, पड़े चुकाना दाम।।

बिन क्रान्ति सम्भव नहीं, प्रेम शान्ति की बात।
क्रान्ति शान्ति से चले, लेकर सबको साथ।।

अग्न हवन में जल रही, जल सिंचन बन्ध जाए।
क्रान्ति शान्ति से सदा, उन्नति पथ को पाए।।

बिन क्रान्ति शान्ति सदा, कायरों की पुकार।
जैसे शिखण्डी चल दिया, शादी को तैयार।।

मौसम मतलब का करे, मन सबके भयभीत।
ढूंढ कर के अब लाइए, बची खुची कुछ प्रीत।।

जीवन गाथा को लिखा, कष्टों ने भरपूर।
मनवा पत्थर हो गया, टूट भरोसा चूर।।

कानों से जो देखता, वह अन्धा कहलाए।
सुनी सुनाई मानता, वह तो धोखा खाए।।

सुनना जो भी सीख ले, उसको सहना आए।
जो भी सहना सीखता, रहना उसको आए।।

सत्य सदा यह चाहता, सभी लेय पहचान।
असत्य छिपता फिर रहा, बनकर के अनजान।।

नरेन्द्र आहूता विवेक
602 जी एच 53, सेक्टर 20
पंचकूला (हरियाणा)

विपरीत व्यवस्था और सोच क्यों?

1947 में आई एल पी केवल एक राज्य में थी। नागालैंड और मिजोरम बनने पर आई एल पी तीन राज्यों में लागू हो गई। 2019 में मणिपुर में भी लागू हो गई। इस प्रकार उत्तर पूर्व के 8 राज्यों में से 4 में यह लागू हो गई। यह कार्य गलत और निन्दनीय है।

जम्मू-कश्मीर से अनुच्छेद 370 हटाना प्रशंसनीय और सराहनीय है। आई एल पी लगाना निन्दनीय है।

हमारा सुझाव है कि चारों राज्यों के क्षेत्रीय नेताओं को इस बात से सहमत कर लिया जाए कि आई ए एस स्तर के 20 लोगों को राज्यपाल, राजदूत, हाई कमिश्नर, उप राज्यपाल, मंत्री आदि पद दे दिए जाएँ और वे आई एल पी को समाप्त कर दें।

सतीश चन्द गोयल
नगर आर्य समाज
18/186, टीचर्स कोलोनी
बुलन्दशहर

****

गरीब भाइयों को न्याय कैसे मिलेगा

सर्वोच्च न्यायालय के एक अत्यंत महत्वपूर्ण फैसले पर देश के अखबारों और चैनलों का बहुत कम ध्यान गया है। फैसले का मैं इसलिए स्वागत करता हूँ कि यह देश से जातिवाद को खत्म करने में बहुत मदद करेगा।

फैसला यह है कि आप किसी भी सरकार को जाति के आधार पर नौकरियों में आरक्षण देने के लिए मजबूर नहीं कर सकते। हमारे देश में अनुसूचित जाति, जनजाति और पिछड़ों को आरक्षण देने की प्रथा चली आ रही है। सरकारी नौकरियों में इनकी संख्या इनके अनुपात में काफी कम है। उनके साथ सदियों से अन्याय होता रहा है। ये सब लोग मेहनतकश होते हैं। हाड़तोड़ काम करते हैं। हमारे राजनीतिक दलों ने इस अन्याय को ठीक करने के लिए एक बहुत ही सस्ता-सा रास्ता निकाल लिया है। वह है, सरकारी नौकरियों में उनको आरक्षण दे दिया जाए। कोई आदमी किसी पद के योग्य है या नहीं है, यदि वह अनुसूचित है या पिछड़ा है तो उसे उस पद पर प्रतिष्ठित किया जा सकता है। इन जातियों के लोगों ने इसे अपना जन्मसिद्ध अधिकार समझ लिया था।

कुछ वर्ष पहले सर्वोच्च न्यायालय ने पिछड़ों में जो क्रीमी लेयर याने मलाईदार परत याने संपन्न लोग हैं, उनके आरक्षण को अनुचित बताया और अब उसने यह एतिहासिक फैसला दिया है कि अनुसूचितों को आरक्षण देना राज्य सरकारों की इच्छा पर निर्भर करेगा। यह अनिवार्य नहीं होगा। यह अनुसूचितों का मूलभूत अधिकार नहीं है। उसने उत्तराखंड उच्च न्यायालय के 2008 में दिए गए फैसले को रद्द कर दिया और कहा कि उत्तराखंड सरकार को पूरा हक है कि वह समस्त सरकारी पदों को बिना किसी आरक्षण के भर सके। संविधान की धारा 16 में आरक्षण संबंधी जो प्रावधान है, वह राज्य सरकारों को इस बात की छूट देता है कि वे अपनी जांच के आधार पर तय करें कि उन्हें कोई पद आरक्षित करने हैं या नहीं? यही सिद्धांत पदोन्नतियों पर भी लागू होता है।

मुझे विश्वास है कि सभी राज्य और केंद्र सरकारें इस फैसले पर सख्ती से अमल करेंगी। तब प्रश्न यह होगा कि हमारे करोड़ों पिछड़े, ग्रामीण, गरीब भाइयों को न्याय कैसे मिलेगा? उनके साथ न्याय करना बेहद जरुरी है। राष्ट्र का यह नैतिक कर्तव्य है। दो तरीके हैं। पहला, उन सबके बच्चों के लिए शिक्षा, भोजन और वस्त्र मुफ्त दिए जाने चाहिए और दूसरा, मानसिक और शारीरिक श्रम की कीमतों में एक से दस गुने से ज्यादा फर्क नहीं होना चाहिए। वे अपनी योग्यता से आगे बढ़ेंगे। किसी की दया के मोहताज नहीं होंगे। स्वाभिमानी राष्ट्र का निर्माण होगा।

डॉ. वेदप्रताप वैदिक
www.drvaidik.in

****

लिवर से ही जीवन है, लिवर की रक्षा करें

आपका लिवर (जिगर) शरीर की सबसे बड़ी प्रयोगशाला हैं लिवर की बदौलत ही शरीर का आंतरिक वातावरण समस्वच्छ और स्वास्थ्यवर्धक रहता है। बाहर से आए और अन्दर उत्पन्न सभी विषैले पदार्थों का नाश लिवर ही करता है।

पोषक तत्त्वों का निर्माण यहीं होता है और निर्माण और विकास के लिए आवश्यक प्रोटीन्स लिवर ही बनाता है ऊर्जा के लिए जरूरी ग्लूकोज का लाइकोजेन के रूप में संचय यही होता है।

लिवर में तीन तरह की रक्त वाहिनियाँ होती हैं – धमनियाँ जो आक्सीकृत कुछ शुद्ध रक्त लाती है, शिराएँ जो अशुद्ध रक्त ले जाती है और पोर्टल शिरायें जो आँतों से शोषित तत्वों वाला रक्त शुद्धि करण के लिए पहले लिवर तक लाती है। लिवर की लेवोरेटरी में जाँच परिस्कृत और प्रमाणित होने पर ही तत्त्व हृदय के रक्त पहुँचाते हैं।

देश में लीवर की बीमारियों से मरने वाले लोगों में सबसे अधिक रोगी शराब जनित लिवर सिरोसिस ओर हैपेटिक फेलियोर से मरते हैं।

लिवर शरीर का एकमात्र अंश है जो नष्ट होने पर पुनः निर्माण कर अपना नवीनीकरण कर सकता है। लिवर का रिजर्व पावर विलक्षण होता है आधे से अधिक नष्ट होने पर ही यह तकलीफ देता है।

पित्त लीवर में ही बनता है लिवर में ही छनता है और वहाँ से छनकर ही पित्त की थैली में पहुँचता है।

हरिश्चन्द आर्य
अधिष्ठाता उपदेश विभाग
अमरोहा उ.प्र.

****

एल.आर.एस. डी.ए.वी. अबोहर में बोर्ड परीक्षा संबन्धित कॉउंसलिंग

एल.आर.एस. डी.ए.वी. सीनियर सेकंडरी मॉडल स्कूल अबोहर में सी बी एस ई की बोर्ड कक्षाओं की परीक्षा को मद्देनजर बोर्ड कक्षाओं के विद्यार्थियों के अभिभावकों हेतु कॉउंसलिंग सत्र का आयोजन किया गया। सत्र का शुभारंभ सामूहिक रूप से गायत्री मंत्र गायन से किया गया।

प्रिंसीपल श्रीमती स्मिता शर्मा ने अभिभावकों से उनकी समस्याओं को सुना और स्कूल एवं शिक्षकों से उनकी क्या अपेक्षाएँ हैं, इस विषय पर चर्चा की। श्रीमती शर्मा ने कहा कि बच्चों के इम्तिहान की घड़ी नजदीक आ गई है ऐसे में हम सभी मिलकर उनका मनोबल बढ़ायें। उन्होंने कहा कि अभिभावक बच्चों को अपनी अपेक्षाओं के बोझ में न दबाएँ बल्कि उन्हें अपनी इच्छा व योग्यता अनुसार अपना कैरियर चुनने की आजादी दें।

श्रीमती शर्मा ने अभिभावकों से कहा कि वे इस बात का खास ध्यान रखें कि किसी भी स्थिति में बच्चे के मन में तनाव पैदा न हो और यह सुझाव दिया कि बच्चे की नींद, आहार मनोरंजन आदि पर विशेष ध्यान दें। पढ़ाई के लिए ज्यादा दबाव न डालें, बल्कि ऐसा माहौल बनाएं कि बच्चे स्वयं अपनी पढ़ाई के प्रति गंभीर रहें।

उन्होंने कहा कि छात्र–छात्राएं पढ़ने का समय और मेहनत को बढ़ाएं। धैर्य, गंभीरता व एकाग्रता के साथ पढ़ाई करें। टीवी, मोबाइल व अन्य किसी तरह के आयोजन से अपने आपको कुछ दिनों तक दूर रखें, ताकि पूरा ध्यान पढ़ाई पर ही केंद्रित रहे।

अभिभावकों द्वारा खुलकर अपने प्रश्न रखे गए व बच्चों की समस्याओं को दूर करने संबंधी चर्चा की गई। श्रीमती शर्मा द्वारा सी बी एस ई के अलग अलग नियमों व शर्तों सम्बन्धी भी विस्तारक जानकारी दी गई। श्रीमती शर्मा सी.बी.एस.ई. की जिला फाजिल्का के सिटी कोआरडीनेटर भी है। सत्र का समापन राष्ट्रीय गान के साथ हुआ।

स्वामी शक्तिवेश जी के बलिदान दिवस पर यज्ञ एवं सत्संग

स्वामी शक्तिवेश जी के बलिदान दिवस का दो दिवसीय कार्यक्रम का गायत्री महायज्ञ एवं श्रद्धांजलि समारोह के साथ सम्पन्न हुआ। कार्यक्रम स्वामी श्रद्धानन्द जी पलवल की अध्यक्षता में हुआ। श्री कर्ण सिंह यादव तथा कुनाल आर्य यजमान तथा ब्र. सुभाष आर्य यज्ञ ब्रह्मा रहे।

ब्रसत्य काम एवं श्री ओमप्रकाश रोहतक ने समाज में बढ़ती हुई अनैतिकता पर दुःख प्रकट करते हुए कहा कि समय रहते इन बुराईयों पर हमने रोक नहीं लगाई तो इसके भंयकर दुष्परिणाम होंगे। आचार्य योगेन्द एवं योगाचार्य सत्यपाल वत्स ने शारीरिक उन्नति के लिए विभिन्न यौगिक क्रियायें सिखाते हुए हमेशा खुश रहने पर ज़ोर दिया। उपस्थित महानुभावों ने स्वामी शक्तिवेश जी के संन्यास से पूर्व कृष्णदत्त शर्मा के रूप में गांव माछरौली की सरकारी स्कूल में आदर्श अध्यापक की भूमिका को कृतज्ञता से याद किया और कहा कि उन्होंने हमें अच्छे संस्कार दिये।

स्वामी श्रद्धानन्द जी ने बताया स्वामी शक्तिवेश जी ने राष्ट्रीय सन्त के रूप में अपनी भूमिका निभाई। गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ, गुरुकुल धासेड़ा, वैदिक आश्रम रेवाड़ी आदि संस्थाओं का सफल संचालन किया। उनके महान कार्यों से हमें आर्य समाज के संगठन को मजबूत करने की प्रेरणा मिलती है। ऋषि लंगर की उत्तम व्यवस्था थी।

श्री अर्जुन देव चढ्डा को मिला लाइफटाइम एचीवमेन्ट अवार्ड

पंजाबी समाज समिति कोटा के तत्त्वावधान में श्री अर्जुन देव चढ्डा को उनकी सेवाओं और कार्यों के लिए "लाइफटाइम एचीवमेन्ट अवार्ड" प्रदान किया गया। अवार्ड देने से पहले वक्ताओं ने उनके व्यक्तित्त्व तथा कृतित्त्व पर प्रकाश डालते हुए श्री अर्जुन देव चढ्डा द्वारा जिला कोटा में किए गए समाज सेवा के कार्यों की प्रशंसा की और कहा कि श्री अर्जुन देव चढ्डा द्वारा किए गए कार्यों से देश–विदेश में आर्यजन प्रेरणा लेते रहेंगे।

इस अवसर पर श्री अर्जुन देव चढ्डा को पंजाबी समाज समिति की ओर से एक अभिनन्दन एवं सम्मान पत्र भेंट किया गया।

श्री अर्जुन देव चढ्डा को अनेक पुरस्कारों से सम्मानित किया जा चुका है। श्री अर्जुन देव चढ्डा राजस्थान आर्य प्रतिनिधि सभा का प्रभार वहन करने के अतिरिक्त अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में भाग ले चुके हैं।

☞ पृष्ठ 01 का शेष

डी.ए.वी. कालेज नकोदर ...

की प्रशंसा करते हुए कहा कि समाज के विभिन्न वर्गों की उन्नति व ऋषिबोधोत्सव के संदेश को छात्रों तक पहुंचाने के लिए किया जा रहा है। उन्होंने कहा कि कालेज की 50वीं वर्षागांठ पर आगे और भी ऐसे समागम आयोजित किए जाएंगे।

प्रसिद्ध भजन गायक सुरिन्दर गुलशन ने भजनों द्वारा आर्य समाज व ऋषि महिमा का गुणगान किया। इस समागम में अलग–अलग स्कूलों के छात्रो ने भी भाग लिया और वेदों के मंत्रों व कविताओं का उच्चारण किया।

प्रधान सोमदत्त मेहता ने सभी को आर्शीवाद दिया और वेदों को पढ़ने–पढ़ाने के लिए उत्साहित किया। उप–सचिव वरिन्दर चोपड़ा ने सभी का धन्यवाद किया।

Registration No. R.N.I. 39\57
Delhi Postal R. No. D.L. (ND)-11\6066\2018-20
अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लाइसैंस नं. U(C)-103\2018-20
Posted at N.D.P.S.O. ON 19/20-02-2020

सोहन लाल डी.ए.वी. शिक्षा महाविद्यालय अम्बाला में हुई अखिल भारतीय यज्ञ प्रतियोगिता

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि उपसभा हरियाणा के तत्त्वावधान में आर्य समाज, सोहन लाल डी. ए.वी. शिक्षा महाविद्यालय, अंबाला शहर में राष्ट्र स्तरीय यज्ञ प्रतियोगिता का भव्य आयोजन किया गया। मुख्य अतिथि के रूप में डॉ. ऋषि गोयल, निदेशक–प्राचार्य, प्रारंभ अध्यापक शिक्षा संस्थान, झज्जर, हरियाणा एवं विशिष्ट अतिथि श्री सत्य पाल आर्य, सहमंत्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा, हरियाणा उपस्थित रहे।

राष्ट्र स्तरीय हवन यज्ञ प्रतियोगिता में 38 टीमों ने हिस्सा लिया। इस कार्यक्रम में पहली बार विश्वविद्यालय स्तर की टीमों ने भी भाग लिया जिनमें मुख्यतः डी.ए.वी. विश्वविद्यालय जालंधर, देव संस्कृति विश्वविद्यालय शांतिकुंज, हरिद्वार तथा हंसराज महाविद्यालय (दिल्ली विश्वविद्यालय) प्रमुख थीं। श्री गुलशन चांदना, श्री आर एन मित्तल, श्री ए.पी. मेहता, श्रीमती शशि शर्मा व श्रीमती संजू मित्तल ने निर्णायक मंडल की भूमिका अदा की।

मुख्य अतिथि ने अपने व्याख्यान में वैदिक यज्ञ करने के लाभ व वैज्ञानिक पद्धति के द्वारा किए गए शोध का परिचय देते हुए बताया कि किस प्रकार यज्ञ से पर्यावरण को लाभ होता है। श्री सत्य पाल आर्य जी ने यज्ञ की महिमा का और वर्णन किया और यज्ञ में डाली जाने वाली सामग्री एवं आहुतियों से संबंधित विशेष जानकारी देकर प्रतिभागियों को लाभान्वित किया।

प्रतियोगिता को पांच भागों में बांटा गया था – प्रथम **चुनमुन वर्ग** कक्षा 1 से 4 तक, **कनिष्ठ वर्ग** कक्षा 5 से 8 तक, **वरिष्ठ वर्ग** कक्षा 9 से 12 तक, **महाविद्यालय स्तर** एवं **विश्वविद्यालय स्तर।**

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, मॉडल टाउन, चमन वाटिका गुरुकुल, अम्बाला शहर, मुरलीधर डी.ए.वी. सीनियर सेंकेण्ड्री स्कूल, अम्बाला शहर, सोहन लाल डी. ए.वी. शिक्षा महाविद्यालय, अम्बाला शहर तथा डी.ए.वी. विश्वविद्यालय जालन्धर की टीमों ने क्रमशः इन वर्गों में प्रथम स्थान प्राप्त किया।

मुख्य अतिथि ने विजेताओं को पुरस्कृत किया। कार्यक्रम का समापन शांति पाठ से किया गया। अंत में डॉ. नरेंद्र कौशिक जी ने सभी आर्य जनों का हार्दिक धन्यवाद ज्ञापन किया।

एम. एल. खन्ना डी.ए.वी. द्वारका ने ग्यारह कुण्डीय यज्ञ से परीक्षार्थियों को शुभकामनायें दी

डी.ए.वी. द्वारका में आर्य परंपरा निर्वहन करते हुए दसवीं एवं बारहवीं के परीक्षार्थियों की शुभकामना हेतु ग्यारह कुण्डीय यज्ञ का आयोजन किया गया। इस आयोजन में यज्ञ ब्रह्मा श्री वी. बी. आर्य जी थे। उन्होंने यज्ञ करवाते समय यज्ञ की प्रत्येक विधि का अत्यंत तर्कसम्मत एवं वैज्ञानिक कारणों सहित उल्लेख किया, प्रत्येक क्रिया का महत्त्व एवं उसकी शक्ति से अवगत कराया तथा मंत्रों का सरलार्थ बताया।

विद्यार्थियों में यज्ञ के प्रति रुचि संवर्धन हेतु यज्ञ के पर्यावरणीय एवं शारीरिक, मानसिक तथा आत्मिक लाभों को बताया गया। छात्रों ने सारी प्रक्रिया में शांति से भाग लिया एवं यज्ञ किया। इस अवसर पर श्री के बी आर्य ने विद्यार्थियों को परीक्षा की तैयारी के सकारात्मक उपाय भी बताए तथा उनकी सफलता के लिए शुभकामनाएँ प्रदान कीं।

विद्यालय के दो भूतपूर्व विद्यार्थी–समीक्षा पुरी एवं भव्य अग्रवाल (इस समय श्री राम कॉलेज ऑफ कॉमर्स (दि. वि.) के विद्यार्थी) भी उपस्थित थे। उन्होंने विद्यार्थियों को परीक्षाओं की समुचित तैयारी के लिए महत्त्वपूर्ण उपाय बताए तथा अपने अनुभव साझा किए। विद्यार्थियों को हर हाल में आत्मविश्वास बनाए रखने ,अपनी दिनचर्या सही रखने एवं समुचित नींद तथा सही खानपान रखने की सलाह दी।

कार्यक्रम के समापन पर विद्यालय की प्रधानाचार्य श्रीमती मोनिका मेहन ने आदरणीय आर्य जी का आभार प्रकट किया तथा विद्यार्थियों को निर्देश पालन करने का समुचित संदेश दिया तथा उन्हें आगामी परीक्षाओं के लिए शुभकामनाएँ प्रदान कीं।

डी. ए. वी. वेलचेरी, चेन्नई में विश्व एड्स दिवस पर कार्यक्रम

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल की चेन्नई के अंर्तगत विद्यालय के प्रांगण में विश्व एड्स दिवस मनाया गया। कार्यक्रम के मुख्य अतिथि प्रशान्त अस्पताल के डॉ. गणेश और डॉ. जी. के. कण्णन रहे। कार्यक्रम का शुभारंभ कक्षा सातवीं की छात्रा द्वारा प्रस्तुत विचारों से हुआ। मुख्य अतिथियों ने एड्स संबंधी आवश्यक जानकारियाँ देते हुए युवा वर्ग को इससे सचेत रहने के लिए प्रेरित किया। वर्तमान काल में इसके प्रति अज्ञानता एड्स को महामारी का रूप लेने में देर नहीं लगाती। इस संदर्भ में बचाव के रास्तों पर भी प्रकाश डाला गया। बच्चों द्वारा पूछे गए प्रश्नों के जवाब भी मुख्य अतिथियों ने संतोषजनक रूप से दिए।

डॉ. कण्णन ने एड्स के संबंध में फैली हुई भ्रांतियों का खंडन करते हुए बताया कि ये बीमारी छूने से नहीं फैलती। इससे ग्रसित व्यक्तियों के साथ हमें प्रेमपूर्वक रहना चाहिए। खेलकूद शारीरिक सौष्ठव की मुख्य सीढ़ी है, इसके बारे में बताते हुए डॉ. कण्णन ने बच्चों का घर के बाहर खेलने को अति उत्तम बताया।

इसके उपरांत कक्षा सातवीं के विद्यार्थियों द्वारा नृत्य नाटिका प्रस्तुत की गई, जिसका मुख्य संदेश एड्स के लक्षणों एवं सावधानी बताना था। कार्यक्रम के अंतिम चरण में प्रधानाचार्या श्रीमती मीनू अग्रवाल के नेतृत्व में सभी विद्यार्थियों एवं शिक्षकगणों द्वारा प्रतिज्ञा ली गई कि हम मिल–जुलकर इस बीमारी को जड़ से समाप्त करेंगे। सामाजिक उत्तरदायित्व का निर्वाह करते हुए कार्यक्रम बहुत ही ज्ञानवर्धक रहा।

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा मंदिर मार्ग के लिए **एस.के शर्मा** द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित **अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स (प्रा.) लि.,** डब्ल्यू–30, ओखला, फेस–II, नई दिल्ली–110020 (दूरभाष : 26388830–32) से मुद्रित एवं कार्यालय **'आर्य जगत्'** आर्यसमाज भवन मंदिर मार्ग नई दिल्ली से प्रकाशित मो.–9868894601, 23362110, 23360059 सम्पादक – **पूनम सूरी**